संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित
ऋषि प्रसाद
हिन्दी
मूल्य : रु. ६/-
१ अगस्त २०१०
वर्ष : २० अंक : २
(निरंतर अंक : २१२)
रक्षाबंधन,
नारियली पूर्णिमा
२४ अगस्त
जन्माष्टमी
२ सितम्बर
जीवन परमात्मा का मधुमय संगीत है, लीलाधर कन्हैया का आनंद-नृत्य है। फिर दुःखी, चिंतित क्यों होना ! सदैव सम और प्रसन्नमुख रहो, तुम्हारा स्वरूप ही आनंदस्वरूप है, उसमें दुःख के लिए स्थान ही कहाँ ?
परम पूज्य
संत श्री आसारामजी बापू
सर्वरोगोपशमनं सर्वाशुभविनाशनम् ।
सकृत्कृते नाब्दमेकं येन रक्षा कृता भवेत् ॥
'रक्षाबंधन पर्व पर धारण किया हुआ रक्षासूत्र सम्पूर्ण रोगों तथा अशुभ कार्यों का विनाशक है। इसे वर्ष में एक बार धारण करने से वर्ष भर मनुष्य रक्षित हो जाता है।'
(भविष्य पुराण)

गुरुपूर्णिमा महोत्सव-२०१०
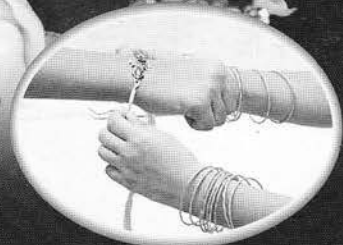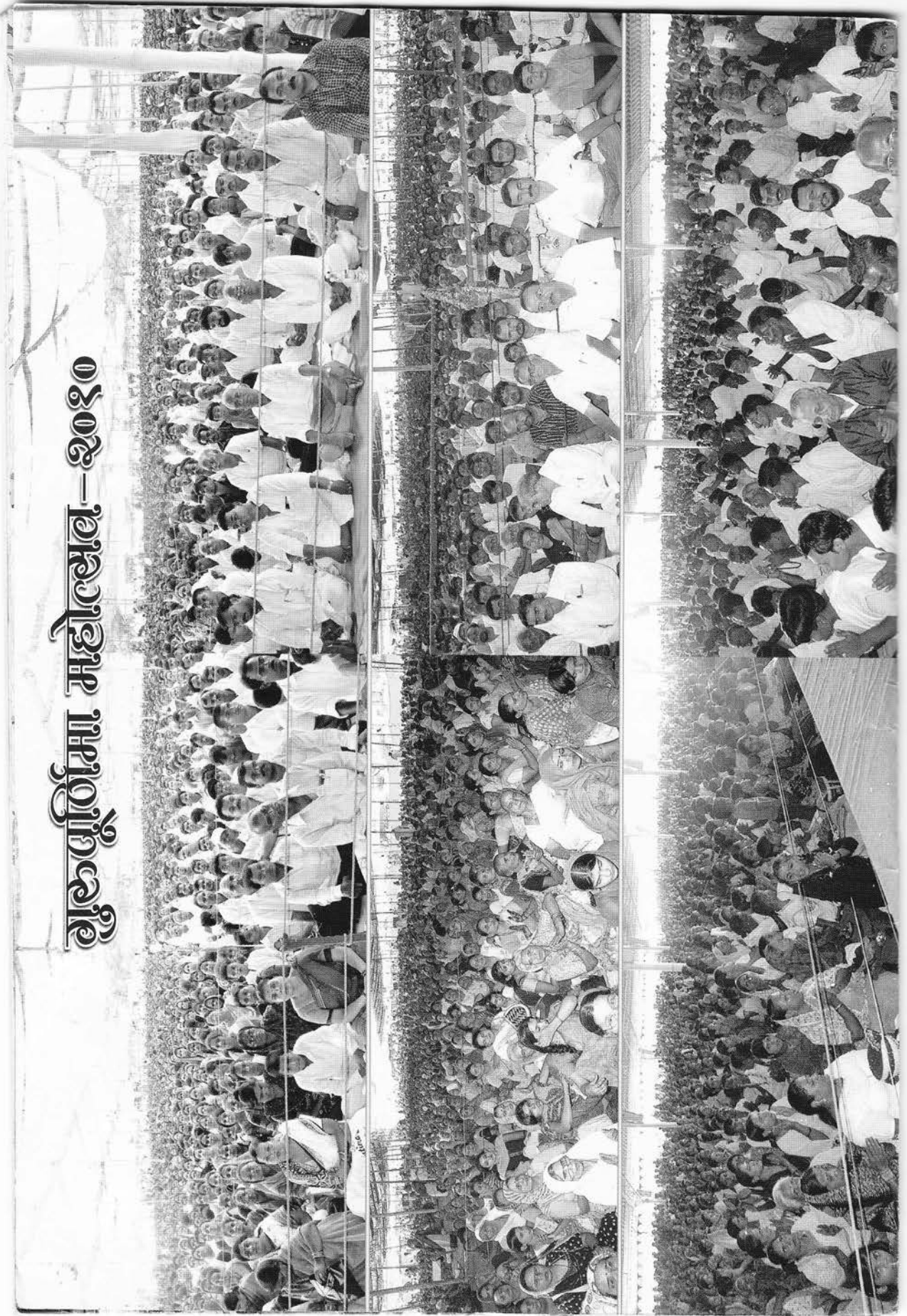
ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलगू, कन्नड़, अंग्रेजी व सिंधी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २० अंक : २
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २१२)
१ अगस्त २०१० मूल्य : रु. ६-००
श्रावण-भाद्रपद वि.सं. २०६७

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रिज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद- ३८०००९ (गुजरात).
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

(१) वार्षिक : रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २२५/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(सभी भाषाएँ)

(१) वार्षिक : रु. ३००/-
(२) द्विवार्षिक : रु. ६००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. १५००/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	द्विवार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	७०	१३५	३२५
अन्य देशों में	US$20	US$40	US$80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता

'ऋषि प्रसाद', संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुजरात).
फोन नं. : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

इस अंक में...

विभिन्न टी.वी. चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

रोज सुबह ५-३० व ७-३० बजे तथा रात्रि १०-०० बजे

रोज सुबह ७-०० बजे

दिशा — रोज सुबह ८-१० बजे

JUS one (अमेरिका) — सोम से शुक्र शाम ७ बजे, शनि-रवि शाम ७-३० बजे

✲ A2Z चैनल रिलायंस के 'बिग टीवी' पर भी उपलब्ध है। चैनल नं. 425
✲ care WORLD चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 770
✲ दिशा चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 757
✲ JUS one चैनल 'डिश टीवी' (अमेरिका) पर उपलब्ध है। चैनल नं. 581

भगवान को अपना माने बिना तुम्हारी खैर नहीं !

(पूज्य बापूजी की हृदयस्पर्शी अमृतवाणी)

भगवान को अपना माने बिना तुम्हारी खैर नहीं ! जिसको भगवान अपने नहीं लगते उसको माया ऐसा बिलो देती है, ऐसा मथ देती है कि तौबा-तौबा ! आया काम तो सारे शरीर को मथ के निचोड़ डालेगा। आया क्रोध तो सारे शरीर को मथ के सिर में गर्मी चढ़ा देगा। आया लोभ तो बस, रुपया-रुपया दिखेगा, डॉलर-डॉलर दिखेगा। खूब तेज भगायी गाड़ी... कहाँ जा रहे हैं ? नौकरी पर जा रहे हैं। फिर क्या ? डॉलर आ गये। फिर क्या ? कुछ खरीद लिया, बेच दिया। फिर क्या ? ओहो ! जिंदगी बिलो डाली।

जवान व्यक्ति कहता है जीवन मजे से भरपूर है परंतु बुद्धिमान व्यक्ति कहता है (संसारी) जीवन में दुःख-ही-दुःख भरा है। यह संसार सपने जैसा है, मूर्ख इसमें सुख खोजने जाता है। जो भगवान को अपना और अपने को भगवान का नहीं मानता उसको माया ऐसा बिलो देती है, ऐसा बिलो देती है कि दही में से तो मक्खन निकलता है पर इसके मथने से तो मुसीबतें निकलती हैं। फिर घोड़ा, गधा, कुत्ता, बिलार बन जाते हैं। अजनाभ खंड के एकछत्र सम्राट भरत, जिनके नाम से इस देश का नाम भारत पड़ा, उन्हें हिरण प्यारा लगा और मरने के बाद वे हिरण बन गये; राजा नृग गिरगिट हो गये; राजा अज अजगर बन गये... माया ऐसा मथ डालती है !

माया ऐसी नागिनी जगत रही लिपटाय।
जो तिसकी सेवा करे वा को ही वो खाय॥

जो जितना भगवान को चाहता है माया उतनी उसकी सेवा करके हाथ जोड़कर अलग-से ठहरती है कि कहीं भगवान के दुलारे को दुःख न हो, कष्ट न हो। माया उसके अनुकूल हो जाती है, कष्ट नहीं देती है और जो माया को जितना चाहता है, माया उतना ही उसको बिलो देती है।

कोई खानदानी महिला हो और उसको कोई अपनी औरत की नजर से देखे तो जूते खायेगा कि नहीं खायेगा ? खायेगा। फिर लक्ष्मी तो है भगवान की, ऐसे ही माया तो है भगवान की और कोई उसे अपनी बनाना चाहे तो जूते खायेगा कि नहीं खायेगा ? खायेगा। धोबी जैसे कपड़े उठा-उठा के, घुमा-घुमा के पटकता है, ऐसे ही माया फिर उसको घुमा-घुमा के फेंक देती है गधे की योनि में, कुत्ते की योनि में, भैंसे की योनि में... कि 'अब बन जा भैंसा, बन जा कुत्ता, बन जा मगर, बन जा कुछ-का-कुछ... अरे, मैं भगवान की सती-साध्वी और तू मुझे अपना बनाने को आया ! मालिक बनता है मेरा !' भगवान तुम्हारे हैं, तुम भगवान के हो। लक्ष्मीपति भगवान हैं माया के पति। तुम माया के पति बनने गये, माया के स्वामी बनने गये तो दे धोखम-धोखा !

कराटेवाले कैसी पिटाई कर देते हैं, कैसे मारपीट करते हैं कि पता भी न चले, खून भी न निकले और मार खानेवाले तौबा पुकार लेते हैं। माया तो उससे भी ज्यादा पिटाई करती है। कराटेवालों की पिटाई के बाद तो दो दिन में थोड़ा आराम हो जाय पर यह माया तो चौरासी लाख जन्मों तक बराबर पिटाई करती रहती है। मरते

समय भी इसीकी चिंता लगी रहती है कि 'मेरे लड़कों का क्या होगा, मेरे कारखाने का क्या होगा, मेरी दुकान का क्या होगा ?...'

इन्सान की बदबख्ती अंदाज से बाहर है ।
कमबख्त खुदा होकर बंदा नजर आता है ॥

है तो भगवान का अंश, है तो **'चेतन अमल सहज सुख रासी'** परंतु माया में ऐसा फँसा है कि तौबा हो रही है । ऐसे-ऐसे बिलोया जाता है कि बस फिर वही-का-वही । समर्थ रामदास कहते हैं कि मरता तो कोई है पर शोक दूसरे करते हैं और शोक करनेवाले बेवकूफों को पता नहीं कि हम भी ऐसे ही जायेंगे । कभी-कभी तो किसीको श्मशान में छोड़कर जाते ही कोई खुद मर जाता है ।

कोई आज गया, कोई कल गया,
कोई जावन को तैयार खड़ा ।

यही रीति है संसार की । इसमें किसीका इन्कार चलता ही नहीं । तो अब क्या करें ?

जहाँ मौत की दाल नहीं गलती उस चैतन्य देव को जान लो, उसमें प्रीति करो, उसको पहचान लो बस ।

कैसे पहचानें ? भगवान कहते हैं :

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥

'उन निरंतर मेरे ध्यान आदि में लगे हुए और प्रेमपूर्वक भजनेवाले भक्तों को मैं वह तत्त्वज्ञानरूप योग देता हूँ, जिससे वे मुझको ही प्राप्त होते हैं ।' **(गीता : १०.१०)**

एक मनुष्य सूरज को देख सकता है तो सारी मनुष्य-जाति सूरज को देख सकती है । एक मनुष्य आकाश को देख सकता है तो सभी मनुष्य आकाश को देख सकते हैं । एक मनुष्य पृथ्वी गोल है यह जान सकता है तो सभी मनुष्य ऐसा जान सकते हैं । ऐसे ही एक मनुष्य अपने आत्मा-परमात्मा को जान सकता है तो सभी मनुष्य जान सकते हैं । फिर काहे को निराश होना ! काहे को हताश होना ! काहे को उस महान लाभ से वंचित रहना, दुर्लभ समझना !

एक व्यक्ति देश का प्रधानमंत्री बन गया तो दूसरा व्यक्ति पहले के हटने तक दंड-बैठक करे परंतु एक को साक्षात्कार हो गया तो दूसरे सब तैयार हो जायें, दंड-बैठक की जरूरत नहीं है । प्रधानमंत्री की कुर्सी एक है किंतु आत्मा तो आप सबके पास वही-का-वही है । आत्मा भी एक है किंतु कुर्सी परिच्छिन्न है और आत्मा व्यापक है, ब्रह्म है ।

जैसे - आकाश एक है और उसमें कई घड़े हैं । अब एक घड़ा अपने भीतर के आकाश-तत्त्व को जान ले तो क्या जब तक वह न फूटेगा, तब तक दूसरे घड़े अपने भीतर के आकाश-तत्त्व को नहीं जान सकेंगे ? नहीं पा सकेंगे ? अरे ! एक ने जाना तो दूसरे उत्साहित होंगे । दूसरे घड़े भी अपने आकाश-तत्त्व को जान सकते हैं । ऐसे ही कोई एक अपने परमात्म-तत्त्व को जान ले तो दूसरे व्यक्ति भी अपने परमात्म-तत्त्व को पा सकते हैं ।

एक प्रधानमंत्री बनता है तो दूसरे के प्रधानमंत्री होने की सम्भावना पाँच साल तक दब जाती है किंतु यहाँ एक को साक्षात्कार हो जाता है तो हजारों की सम्भावनाएँ जागृत हो जाती हैं । साक्षात्कार जब होगा तब होगा पर उसका आनंद, झलक और सच्चाई सहित रसमय जीवन तो अभी हो रहा है । बिल्कुल सच्ची बात है, पक्की बात है । किसीने कोई पद पाया है तो उस पद का रस तो जब तक वह हटेगा या मरेगा नहीं तब तक दूसरा नहीं पा सकेगा परंतु परमात्म-पद, परमात्म-रस आपने पाया है तो आपके होते ही कइयों को उसका स्वाद, रस, उत्साह, मदद मिलती है । इसीलिए यह रास्ता जोड़नेवाला है, इस रास्ते में संवादिता है । भोग में विवादिता है, भोग का रास्ता तोड़नेवाला है ।

(शेष पृष्ठ १० पर)

भक्तों के भगवान

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

महाराष्ट्र में केशव स्वामी नाम के एक महात्मा हो गये । वे जानते थे कि भगवन्नाम जपने से कलियुग के दोष दूर हो जाते हैं । यदि कोई शुरू में होंठों से भगवान का नाम जपे, फिर कंठ में, फिर हृदय से जपे और नाम के अर्थ में लग जाय तो भगवान प्रकट भी हो सकते हैं ।

एक बार केशव स्वामी बीजापुर (कर्नाटक) गये । उस दिन एकादशी थी । रात को केशव स्वामी ने कहा : ''चलो, आज जागरण की रात्रि है, सब भक्त हैं तो प्रसाद ले आओ ।'' अब फलाहार में क्या लें ? रात्रि को तो फल खाना नहीं चाहिए । बोले : ''सोंठ और शक्कर ठीक रहेगी क्योंकि शक्कर शक्ति देगी और सोंठ कफ का नाश करेगी । अकेली शक्कर उपवास में नहीं खानी चाहिए । सोंठ और शक्कर ले आओ, ठाकुरजी को भोग लगायेंगे ।''

अब देर हो गयी थी, रात्रि के ग्यारह बज गये थे, दुकानवाले तो सब सो गये थे । किसी दुकानदार को जगाया । लालटेन का जमाना था । सोंठ के टुकड़े और वचनाग के टुकड़े एक जैसे लगे तो अँधेरे-अँधेरे में दुकानवाले ने सोंठ की बोरी के बदले वचनाग की बोरी में से सोंठ समझ के पाँच सेर वचनाग तौल दिया । अब वचनाग तो हलाहल जहर होता है, फोड़े-फुंसी की औषधि बनानेवाले वैद्य उससे ले जाते थे ।

अँधेरे-अँधेरे में शक्कर के साथ वचनाग पीसकर प्रसाद बना दिया गया और ठाकुरजी को भोग लगा दिया । अब ठाकुरजी ने देखा कि केशव स्वामी के सभी भक्त सुबह होते-होते मर जायेंगे। उनको तो बेचारों को खबर ही नहीं थी कि सोंठ की जगह यह हलाहल जहर आया है । ठाकुरजी ने करुणा-कृपा करके प्रसाद में से जहर स्वयं ही खींच लिया । अब सुबह व्यापारी ने देखा तो बोला : 'अरा...रा... रा... यह क्या हो गया ! सोंठ का बोरा तो ज्यों-का-त्यों पड़ा है, मैंने गलती से वचनाग दे दिया ! वे सब भक्त मर गये होंगे । अब मेरा तो सत्यानाश हो जायेगा ।'

व्यापारी डर गया, दौड़ा-दौड़ा आया और बोला : ''कल मैंने गलती से वचनाग तौल के दे दिया था, किसीने खाया तो नहीं ?''

केशव स्वामी बोले : ''वह तो रात को प्रसाद में बँट गया ।'' व्यापारी : ''कोई मरा तो नहीं ?''

''नहीं ! किसीको कुछ नहीं हुआ ।''

केशव स्वामी ठाकुरजी को याद करके बोले : ''प्रभु ! तुमने मेरी लाज रख ली ।''

केशव स्वामी और उस व्यापारी ने मंदिर में जाकर देखा तो ठाकुरजी के शरीर में विकृति आ गयी थी । मूर्ति नीलवर्ण हो गयी, एकदम विचित्र लग रही थी मानो, ठाकुरजी को जहर चढ़ गया हो । केशव स्वामी सारी बात समझ गये, बोले : ''प्रभु ! आपने भाव के बल से यह जहर चूस लिया लेकिन आप तो सर्वसमर्थ हैं । पूतना के स्तनों से हलाहल जहर पी लिया और आप ज्यों-के-त्यों रहे, कालिय नाग के विष का असर भी नहीं हुआ तो यह वचनाग का जहर आपके ऊपर क्यों असर कर गया ? आप कृपा करके इस जहर के प्रभाव को हटा लीजिये और पूर्ववत् हो जाइये ।''

इस प्रकार स्तुति की तो देखते-ही-देखते व्यापारी और भक्तों के सामने भगवान की मूर्ति पहले जैसी प्रकाशमयी, तेजोमयी हो गयी ।

इसको आप क्या समझेंगे, क्या सोचेंगे ?

जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि ।

(संत तुलसीदासजी)

खोजो इसका उत्तर । ❐

निंदकों, कुप्रचारकों की खुल गयी पोल

ईश्वर नायक ने उगला सच

धर्मांतरणवालों के सुनियोजित षड्यंत्र के तहत आश्रम पर झूठे आरोप लगानेवाले ईश्वर नायक को आखिर न्यायाधीश श्री डी.के. त्रिवेदी जाँच आयोग में विशेष पूछताछ के दौरान सच्चाई को स्वीकार करना ही पड़ा। परम पूज्य बापूजी ने करुणा-कृपा कर महामृत्युंजय मंत्र द्वारा मृत्युशय्या पर पड़े ईश्वर नायक को नवजीवन दिया था। उसने माना कि 'मैं जब कनाडा में बीमार पड़ा और मुझे अस्पताल में भर्ती किया गया तो उस दौरान मेरी पत्नी ने फोन द्वारा पूज्य बापूजी का सम्पर्क किया और उनकी सूचना के अनुसार मेरे बिस्तर के पास मंत्रजप किया, उससे मैं ठीक हो गया। मैं मंत्र की शक्ति में मानता हूँ।'

उसने यह भी कहा कि 'पूज्य बापूजी पीड़ित व्यक्ति को ठीक करने के लिए उससे अथवा तो उसके मित्र-परिवार के पास से कोई पैसा, वस्तु नहीं लेते। पूज्य बापूजी द्वारा पीड़ित व्यक्ति को दुःख से मुक्त करने का जो कार्य किया जाता है, वह मेरी दृष्टि से पूज्य बापूजी की समाज-सेवा का एक कार्य है।'

ईश्वर नायक ने यह भी माना कि आश्रम आने के पूर्व उसकी तथा उसके परिवार के लोगों की मानसिक स्थिति बिगड़ी हुई थी और व्यक्ति के खुद के कर्मों का उसके शरीर के अवयवों पर असर होता है। जैसे कर्म हों उसके अनुसार उसकी शारीरिक स्थिति में फर्क पड़ता है।

आश्रम के पवित्र वातावरण में रहकर ईश्वर नायक ने सुख-शांति का अनुभव किया। उसने स्वीकार किया कि 'आश्रम में रहकर साधना करने के दौरान मैंने ऐसी स्थिति का अनुभव किया कि मैं जैसे किसी दिव्य जगत में हूँ। मैं एकदम प्रफुल्लित था और ध्यान में मार्मिक हास्य भी करता। मुझे अद्‌भुत आनंद हुआ। आश्रमवासी सेवक (साधक) शयन के पूर्व शास्त्र की चर्चा, माला द्वारा मंत्रजप और ध्यान करके सोते हैं - यह आश्रम का एक नित्यक्रम है।'

साजिशकर्ताओं ने तथा झूठी कहानियाँ बनानेवाले अखबार ने आश्रम के बड़ बादशाह (वटवृक्ष) के बारे में समाज में मिथ्या भ्रम फैलाये। इस बारे में ईश्वर नायक ने सच्चाई को स्वीकार करते हुए कहा कि 'आश्रम में स्थित वटवृक्ष की परिक्रमा करने से साधकों के प्रश्नों का निराकरण हुआ है, लौकिक लाभ भी हुए हैं - ऐसा मैं जानता हूँ। वटवृक्ष की महिमा के बारे में लोगों के अनुभवों के पत्र एकत्रित करके मेरी पत्नी ने एक पुस्तक भी लिखनी शुरू की थी।'

ईश्वर नायक ने यह भी स्वीकार किया कि 'पंचेड़, रतलाम (म.प्र.) के पास कोई एक गाँव में पूज्य बापूजी द्वारा एक भंडारे का आयोजन किया गया था। उसमें अनेक आदिवासी आये और भोजन किया। भोजन कराने के बाद पूज्य बापूजी द्वारा मुझे नोटों का एक बंडल उन आदिवासियों में बाँटने के लिए दिया गया। मैंने खुद बंडल के नोटों को प्रत्येक आदिवासी को दक्षिणा के रूप में दिया। उस समय मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि पूज्य बापूजी द्वारा मुझे दिये गये नोट वहाँ उपस्थित सभी आदिवासियों में बाँटने के बाद भी कम नहीं होते थे ! इससे मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने ऐसा चमत्कार देखा कि नोटों का जो बंडल मुझे बाँटने के लिए दिया गया था, वह बढ़ गया है।'

कृतघ्नता का कोई प्रायश्चित नहीं है। परम पूज्य बापूजी के अनगिनत उपकारों को भूलकर षड्यंत्रकारियों का साथ देनेवाले ईश्वर नायक ने स्वयं ही अपने हाथों मानो, अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी चलायी है, जिससे वह सज्जनों की दृष्टि में धिक्कार का पात्र बन गया है। (क्रमशः) ☐

निंदकों, कुप्रचारकों की खुल गयी पोल

ईश्वर नायक ने उगला सच

धर्मांतरणवालों के सुनियोजित षड्यंत्र के तहत आश्रम पर झूठे आरोप लगानेवाले ईश्वर नायक को आखिर न्यायाधीश श्री डी.के. त्रिवेदी जाँच आयोग में विशेष पूछताछ के दौरान सच्चाई को स्वीकार करना ही पड़ा । परम पूज्य बापूजी ने करुणा-कृपा कर महामृत्युंजय मंत्र द्वारा मृत्युशय्या पर पड़े ईश्वर नायक को नवजीवन दिया था । उसने माना कि 'मैं जब कनाडा में बीमार पड़ा और मुझे अस्पताल में भर्ती किया गया तो उस दौरान मेरी पत्नी ने फोन द्वारा पूज्य बापूजी का सम्पर्क किया और उनकी सूचना के अनुसार मेरे बिस्तर के पास मंत्रजप किया, उससे मैं ठीक हो गया । मैं मंत्र की शक्ति में मानता हूँ ।'

उसने यह भी कहा कि 'पूज्य बापूजी पीड़ित व्यक्ति को ठीक करने के लिए उससे अथवा तो उसके मित्र-परिवार के पास से कोई पैसा, वस्तु नहीं लेते । पूज्य बापूजी द्वारा पीड़ित व्यक्ति को दुःख से मुक्त करने का जो कार्य किया जाता है, वह मेरी दृष्टि से पूज्य बापूजी की समाज-सेवा का एक कार्य है ।'

ईश्वर नायक ने यह भी माना कि आश्रम आने के पूर्व उसकी तथा उसके परिवार के लोगों की मानसिक स्थिति बिगड़ी हुई थी और व्यक्ति के खुद के कर्मों का उसके शरीर के अवयवों पर असर होता है । जैसे कर्म हों उसके अनुसार उसकी शारीरिक स्थिति में फर्क पड़ता है ।

आश्रम के पवित्र वातावरण में रहकर ईश्वर नायक ने सुख-शांति का अनुभव किया । उसने स्वीकार किया कि 'आश्रम में रहकर साधना करने के दौरान मैंने ऐसी स्थिति का अनुभव किया कि मैं जैसे किसी दिव्य जगत में हूँ । मैं एकदम प्रफुल्लित था और ध्यान में मार्मिक हास्य भी करता । मुझे अद्‌भुत आनंद हुआ । आश्रमवासी सेवक (साधक) शयन के पूर्व शास्त्र की चर्चा, माला द्वारा मंत्रजप और ध्यान करके सोते हैं - यह आश्रम का एक नित्यक्रम है ।'

साजिशकर्ताओं ने तथा झूठी कहानियाँ बनानेवाले अखबार ने आश्रम के बड़ बादशाह (वटवृक्ष) के बारे में समाज में मिथ्या भ्रम फैलाये । इस बारे में ईश्वर नायक ने सच्चाई को स्वीकार करते हुए कहा कि 'आश्रम में स्थित वटवृक्ष की परिक्रमा करने से साधकों के प्रश्नों का निराकरण हुआ है, लौकिक लाभ भी हुए हैं - ऐसा मैं जानता हूँ । वटवृक्ष की महिमा के बारे में लोगों के अनुभवों के पत्र एकत्रित करके मेरी पत्नी ने एक पुस्तक भी लिखनी शुरू की थी ।'

ईश्वर नायक ने यह भी स्वीकार किया कि 'पंचेड़, रतलाम (म.प्र.) के पास कोई एक गाँव में पूज्य बापूजी द्वारा एक भंडारे का आयोजन किया गया था । उसमें अनेक आदिवासी आये और भोजन किया । भोजन कराने के बाद पूज्य बापूजी द्वारा मुझे नोटों का एक बंडल उन आदिवासियों में बाँटने के लिए दिया गया । मैंने खुद बंडल के नोटों को प्रत्येक आदिवासी को दक्षिणा के रूप में दिया । उस समय मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि पूज्य बापूजी द्वारा मुझे दिये गये नोट वहाँ उपस्थित सभी आदिवासियों में बाँटने के बाद भी कम नहीं होते थे ! इससे मुझे आश्चर्य हुआ । मैंने ऐसा चमत्कार देखा कि नोटों का जो बंडल मुझे बाँटने के लिए दिया गया था, वह बढ़ गया है ।'

कृतघ्नता का कोई प्रायश्चित नहीं है । परम पूज्य बापूजी के अनगिनत उपकारों को भूलकर षड्यंत्रकारियों का साथ देनेवाले ईश्वर नायक ने स्वयं ही अपने हाथों मानो, अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी चलायी है, जिससे वह सज्जनों की दृष्टि में धिक्कार का पात्र बन गया है । (क्रमशः) ❐

नम्रता की मूर्ति : तुलसीदासजी

(संत तुलसीदासजी जयंती : १६ अगस्त)

संत विनोबाजी भावे कहते हैं : ''मुझे एक दिन, रात को सपना आया। सात्त्विक मुद्रा का एक व्यक्ति मेरे सामने बैठकर मुझसे बात कर रहा था। विनय-पत्रिका पर चर्चा चल रही थी। उसने दो भजनों के अर्थ पूछे, कुछ शंकाएँ थीं। मैं समझा रहा था। वह एकाग्रता से सुन रहा था और बार-बार सम्मतिदर्शक सिर हिला रहा था। थोड़ी देर के बाद मेरे ध्यान में आया कि ये तो साक्षात् संत तुलसीदासजी हैं, जो मुझसे बात कर रहे हैं और मेरी नींद टूट गयी। मैं सोचने लगा, 'यह क्या हुआ ?' तो ध्यान में आया कि आज तुलसीदासजी की जयंती है। हर साल तुलसी-जयंती के दिन मैं तुलसी-रामायण या विनय-पत्रिका पढ़ता हूँ और तुलसीदासजी का स्मरण कर लेता हूँ, परंतु उस दिन तुलसी-जयंती का स्मरण मुझे नहीं रहा था। इसलिए रात को तुलसीदासजी मुझसे बात करके गये।

तुलसीदासजी ने जब रामायण लिखी, तब प्रचार का कोई साधन नहीं था। उनके हाथ में प्रेस नहीं थी। परंतु इसके बावजूद रामायण का घर-घर में प्रचार हुआ। आज प्रेस होते हुए भी हिंदुस्तान की किसी भी भाषा में कोई ऐसी किताब नहीं है, जो तुलसी-रामायण के समान घर-घर पहुँची हो। तुलसीदासजी ने पैंतालीस साल की उम्र में रामायण लिखी और फिर चालीस साल तक गाँव-गाँव जाकर अपनी मधुर वाणी में रामायण-गान किया।

यह रामकथा ऐसी है कि छोटे बच्चों से लेकर औरतों और ग्रामीणों को भी, जिनको संस्कृत का ज्ञान नहीं है या कम पढ़े-लिखे हैं, उनको भी सुनने में और गाने में आनंद आता है। जिनको गहराई में पैठने की आदत है, उनको वैसे पैठने का भी मौका मिलता है। यह बड़ा भारी उपकार तुलसीदासजी ने हम पर किया है।

सारे समाज का उत्थान करने के लिए, सब प्रकार के अहंकार को छोड़कर वे झुक गये और अत्यंत सरल भाषा में लिखा। विद्वत्-शिरोमणि होकर लिखा 'जागबलिक'। कोई संस्कृत जाननेवाला सहन करेगा ? कहेगा 'याज्ञवल्क्य' लिखना चाहिए। अब लोगों को व्याकरण सिखाना है कि धर्म सिखाना है ! जिन शब्दों का लोग उच्चारण भी नहीं कर सकते, उनके लिए उन्होंने सरल भाषा लिखी और वे कहते हैं कि 'मैं बहुत बड़े ग्रंथों का प्रमाण लेकर लिख रहा हूँ।' अरथ न धरम न काम रुचि। 'धर्म' नहीं कहते 'धरम' कहते हैं, 'अर्थ' नहीं कहते 'अरथ' कहते हैं, 'निर्वाण' नहीं कहते 'निरबान' कहते हैं। युक्ताक्षर तोड़कर आम समाज समझ सके, ऐसी भाषा लिखी।

इतनी नम्रता थी और ऐसे झुक गये समाज को ऊपर उठाने के लिए, जैसे माँ बच्चे को उठाने के लिए झुकती है।

तुलसीदासजी पहले काशी में 'पंचगंगा घाट' पर रहते थे। वहाँ लोगों ने उनको ईर्ष्यावश इतना सताया कि वे मणिकर्णिका घाट पर भाग गये। वहाँ भी अलग-अलग पंथों के लोगों ने बहुत सताया। वहाँ से भी भागे, तीसरे घाट पर गये। आखिर बहुत सताया तो सब छोड़कर काशी के

आखिरी हिस्से में जहाँ एक टूटा-फूटा घाट था 'अस्सी घाट', वहाँ पर रहे। वहाँ ज्यादा बस्ती नहीं थी। आज उसके दक्षिण में हिन्दू विश्वविद्यालय बना है और कुछ बस्ती है, उस जमाने में बस्ती नहीं थी। इस तरह उन्हें बहुत तंग किया गया लेकिन आज सब उनका नाम लेकर आदर से, भक्ति से, प्यार से झुक जाते हैं। यही हाल संत कबीरजी, संत ज्ञानदेव, नानकजी, संत नामदेवजी का हुआ। आद्य शंकराचार्यजी इतने महान थे पर उनका भी यही हाल हुआ था उनके जमाने में।

अपनी भारतीय सभ्यता रामायण की सभ्यता है। दुर्गुणों पर, पाप पर हमला करना यह रामायण का स्वरूप है। उसीके लिए घर-घर में रामायण पढ़ी जाती है। यह कथा कब तक चलेगी ? जब तक गंगा की धारा बहती रहेगी, हिमालय खड़ा रहेगा तब तक यह राम-कथा बहती रहेगी।

तुलसी-रामायण जैसा कोई ग्रंथ नहीं है, जिससे सामान्य किसान भी जो लेना है वह ले सकता है और महाज्ञानी भी जो लेना है वह ले सकता है।

बचपन में माँ ने हमको रामायण का सार सुनाया था कि **'ये दिन भी बीत जायेंगे।'** रामचन्द्रजी पन्द्रह साल के हैं और विश्वामित्रजी उन्हें बुलाने आये हैं। सब लोग चिंतित हैं परंतु रामजी शांत हैं। कोई उनको पूछता है तो कहते हैं : **'ये दिन भी बीत जायेंगे।'** राक्षसों का संहार कर, अनेक पराक्रम कर रामजी वापस आते हैं। उस समय सब आनंद मना रहे हैं लेकिन रामजी तो शांत ही बैठे हैं। उन्हें पूछा जाता है तो वे कहते हैं : **'ये दिन भी बीत जायेंगे।'** जब आता है शादी का प्रसंग, उस समय भी रामजी के मुखारविंद पर शांति और वही जवाब। फिर आया राज्याभिषेक का आनंददायी प्रसंग। तब भी रामजी शांत थे और वही जवाब, **'ये दिन भी बीत जायेंगे।'** इतने में माँ की आज्ञा पर चौदह साल का वनवास मिलता है। फिर भी रामजी शांत ही थे। वही प्रश्न, वही उत्तर। इस प्रकार पूरी रामायण सुख-दुःख के प्रसंगों से भरी है परंतु रामजी के मुख पर सदा वही शांति, वही प्रसन्नता क्योंकि उनको पता था कि **ये दिन भी बीत जायेंगे।''**

पूज्य बापूजी कहते हैं : ''वास्तव में जो बीत रहा है, वह अनित्य शरीर और संसार है और जो उसका साक्षी है वह नित्य अपना आत्मा शुद्ध-बुद्ध चैतन्य है।

श्रीरामजी अपने शुद्ध-बुद्ध स्वरूप में जाग गये थे, वसिष्ठजी का सत्संग आत्मसात् किया था। आप भी सत्संग को आत्मसात् करें। जरा-जरा-सी परिस्थितियों को सत्यबुद्धि से देखकर हर्ष और शोक में फिसलो मत।

हरख सोग जा कै नहीं बैरी मीत समान।
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जान॥

यह बात मैंने पहले भी कई बार कही है। यह उत्तम साधन है। बीतनेवाला बीत रहा है, आप सम सत्ता में रहो। उचित प्रयत्न करो पर परिणाम में सम रहो तो आपने श्रीरामजी की, गुरु वसिष्ठजी की और मेरे गुरुदेव श्री लीलाशाहजी की एक साथ सेवा सम्पन्न कर ली, प्रसाद पचाया ऐसा मैं मानूँगा।'' ❑

''किसीने हमारे साथ अच्छा व्यवहार किया वह हम भूलें नहीं और हमने किसीके साथ अच्छा व्यवहार किया वह याद न रखें तो सुखी रहेंगे। हम क्या करते हैं, हमने अच्छा व्यवहार किया तो वह याद रखेंगे कि 'मैंने यह दिया, यह भला किया...' और किसीने अपने साथ बुरा व्यवहार किया तो वह पकड़कर बैठ जायेंगे, ऐसे लोग दुःखी रहेंगे।'' **- पूज्य बापूजी**

सत्संग-योग

– महर्षि मेँ हीँ परमहंसजी

✻ बिना गुरुभक्ति के सुरत शब्दयोग (नादानुसंधान योग) द्वारा परम प्रभु सर्वेश्वर की भक्ति में पूर्ण होकर अपना परम कल्याण कर लेना असम्भव है।

कबीर पूरे गुरु बिना, पूरा शिष्य न होय।
गुरु लोभी शिष लालची, दूनी दाझन होय ॥

✻ जब कभी पूरे और सच्चे सद्गुरु मिलेंगे, तभी उनके सहारे अपना परम कल्याण करने का काम समाप्त होगा। पूरे और सच्चे सद्गुरु का मिलना परम प्रभु सर्वेश्वर के मिलने के तुल्य ही है।

✻ परम प्रभु सर्वेश्वर को पाने की विद्या के अतिरिक्त जितनी विद्याएँ हैं, उन सबसे उतना लाभ नहीं जितना कि परम प्रभु के मिलने से। परम प्रभु से मिलने की शिक्षा की थोड़ी-सी बात के तुल्य लाभदायक दूसरी-दूसरी शिक्षाओं की अनेकानेक बातें नहीं हो सकती हैं। इसलिए इस विद्या को सिखलानेवाले गुरु से बढ़कर उपकारी दूसरे कोई गुरु नहीं हो सकते और इसीलिए किसी दूसरे गुरु का दर्जा इनके दर्जे के तुल्य नहीं हो सकता है। केवल आधिभौतिक विद्या के प्रकाण्ड से भी प्रकाण्ड व अत्यंत धुरंधर विद्वान के अंतर के आवरण टूट गये हों, यह कोई आवश्यक बात नहीं है और न इनके पास कोई ऐसा यंत्र है, जिससे अंतर का आवरण टूटे व कटे, परंतु सच्चे और पूरे सद्गुरु में ये बातें अवश्य ही होती हैं। सच्चे और पूरे सद्गुरु का अंतर-पट टूटने की सद्युक्ति का किंचिन्मात्र भी संकेत संसार की सब विद्याओं से विशेष लाभदायक है।

गुरु से ज्ञान जो लीजिये, शीश दीजिये दान।
बहुतक भोंदू बहि गये, राखि जीव अभिमान ॥
तन मन ताको दीजिये, जाके विषया नाहिं।
आपा सबही डारिके, राखै साहब मांहि ॥

✻ पूरे और सच्चे सद्गुरु को गुरु धारण करने का फल तो अपार है ही परंतु ऐसे गुरु का मिलना अति दुर्लभ है। आत्मज्ञानी महापुरुष को गुरुरूप में धारण करने से शिष्य गुरु के संग से धीरे-धीरे उनके गुणों से लाभान्वित हो, यह सम्भव है क्योंकि संग से रंग लगता है और शिष्य के लिए वैसे गुरु की शुभकामना भी शिष्य को अद्भुत लाभ अवश्य पहुँचायेगी क्योंकि महापुरुष की दृष्टि से, वाणी से, शरीर से फैलती हुई तन्मात्राएँ परम हितकारी होती हैं। ❑

(पृष्ठ ५ से 'भगवान को अपना माने बिना तुम्हारी खैर नहीं !' का शेष) विषय-विकारी सुख सीमित हैं और परमात्मा असीम है। विषय-विकारी सुख अनित्य हैं और परमात्मा नित्य है, जीवात्मा भी नित्य है।

जब तक नित्य (जीवात्मा) को नित्य (परमात्मा) का सुख, नित्य का ज्ञान, नित्य की मुलाकात नहीं होगी, तब तक अनित्य का कितना भी मिला, कुछ भी हाथ में आनेवाला नहीं है।

अगले जन्म के पैसे, बेटे, पत्नी कहाँ गयी ? पति कहाँ गये ? ऐसा ही इस बार भी होनेवाला है। अपने परमात्मा पति को जान लो। फिर पति के लिए पत्नी वफादार हो जायेगी, पत्नी के लिए पति वफादार हो जायेगा। ईश्वर में टिकते हैं न, तो संसार का व्यवहार भी अच्छी तरह से होता है। उसमें भी कुशलता आ जाती है। संसार के सारे प्रमाणपत्र पाकर भी आदमी इतना कुशल नहीं होता, जितना परमात्म-विश्रांति को पाने से कुशल हो जाता है। ❑

उसके लिए क्या असम्भव है !

महर्षि आयोद धौम्य के तीन प्रमुख शिष्यों में से एक थे वेद । वे विद्याध्ययन समाप्त कर घर गये और वहाँ गृहस्थ-धर्म का पालन करते हुए रहने लगे । उनके भी तीन शिष्य हुए जिनमें सबसे प्यारे उत्तंक थे ।

उत्तंक का अध्ययन समाप्त हो गया । वे घर जाने लगे । विद्याध्ययन की समाप्ति पर गुरुदक्षिणा अवश्य देनी चाहिए - ऐसा सोचकर उन्होंने गुरुजी से विनती की : ''गुरुदेव ! मैं आपको क्या दक्षिणा दूँ ? मैं आपका कौन-सा प्रिय कार्य करूँ ?''

गुरु ने बहुत समझाया कि 'तुमने पूरे मन से मेरी सेवा की है, यही सबसे बड़ी गुरुदक्षिणा है ।' किंतु उत्तंक बार-बार गुरुदक्षिणा के लिए आग्रह करने लगे, तब गुरु ने कहा : ''अच्छा, भीतर जाकर गुरुपत्नी से पूछ आओ । उसे जो प्रिय हो, वही तुम कर दो, यही तुम्हारी गुरुदक्षिणा है ।'' यह सुनकर उत्तंक भीतर गये और गुरुपत्नी से प्रार्थना की, तब गुरुपत्नी ने कहा : ''राजा पौष्य (जिनके राजगुरु थे वेदमुनि) की रानी जो कुण्डल पहने हुए है, वे मुझे आज से चौथे दिन 'पुण्यक' नामक व्रत (वह व्रत जो स्त्रियाँ पति तथा पुत्र के कल्याण की कामना से रखती हैं) के अवसर पर अवश्य लाकर दो । उस दिन मैं उन कुण्डलों को पहनकर ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहती हूँ ।''

यह सुनकर उत्तंक गुरु और गुरुपत्नी को प्रणाम करके पौष्य राजा की राजधानी को चल दिये ।

रास्ते में उन्हें धर्मरूपी बैल पर चढ़े हुए इन्द्र मिले । इन्द्र ने कहा : ''उत्तंक तुम इस बैल का गोबर खा लो । भय मत करो ।'' उनकी आज्ञा पाकर बैल का पवित्र गोबर और मूत्र उन्होंने ग्रहण किया । जल्दी में साधारण आचमन करके वे पौष्य राजा के यहाँ पहुँचे । पौष्य ने ऋषि के आगमन का कारण पूछा । तब उत्तंक ने कहा : ''गुरुदक्षिणा में गुरुपत्नी को देने के लिए मैं आपकी रानी के कुण्डलों की याचना करने आया हूँ ।''

राजा ने कहा : ''आप स्नातक ब्रह्मचारी हैं । स्वयं ही जाकर रानी से कुण्डल माँग लाइये ।'' यह सुनकर उत्तंक राजमहल में गये । वहाँ उन्हें रानी नहीं दिखीं, तब राजा के पास आकर बोले : ''महाराज ! क्या आप मुझसे हँसी करते हैं ? रानी तो भीतर नहीं हैं ।''

राजा ने कहा : ''ब्रह्मन् ! रानी भीतर ही हैं । जरूर आपका मुख उच्छिष्ट है । सती स्त्रियाँ उच्छिष्ट-मुख पुरुष को दिखाई नहीं देतीं ।''

उत्तंक को अपनी गलती मालूम हुई । उन्होंने हाथ-पैर धोकर, प्राणायाम करके तीन बार आचमन किया, तब वे भीतर गये । वहाँ जाते ही रानी दिखायी दीं । उत्तंक का उन्होंने सत्कार किया और आने का कारण पूछा ।

उत्तंक ने कहा : ''गुरुपत्नी के लिए मैं आपके कुण्डलों की याचना करने आया हूँ ।''

उसे स्नातक ब्रह्मचारी और सत्पात्र समझकर रानी ने अपने कुण्डल उतारकर दे दिये और यह भी कहा कि ''बड़ी सावधानी से इन्हें ले जाना । सर्पों का राजा तक्षक इन कुण्डलों की तलाश में सदा घूमा करता है ।'' उत्तंक रानी को आशीर्वाद देकर कुण्डलों को लेकर चल दिये ।

(शेष पृष्ठ २५ पर)

ज्ञान की दृष्टि बना लो

(ज्ञानसिंधु पूज्य बापूजी की अमृतवाणी)

जान लिया कीचड़ में कोई सार नहीं, जान लिया तरंग बनकर किनारों से टकराने में सार नहीं, अब तो मुझे जलराशि में ही अच्छा लगता है। भीड़भाड़ में विकारी लोगों के बीच रहना अच्छा नहीं लगता। एकांत में या तो फिर भगवान की मस्ती में जीनेवाले मस्त साधकों के बीच रहना अच्छा लगता है, बाकी फिर हमें और कहीं अच्छा नहीं लगता। अब इन्द्रियों के प्रदेश में ज्यादा जीना, घूमना अच्छा नहीं लगता। इन्द्रियातीत आत्मभाव में, आत्मज्ञान में ही सुख का अनुभव है। 'आओ सेठ ! बैठो सेठ ! फलाना सेठ !'- ऐसे लोगों के पास अब सेठपने के अहं को पोसने में मजा नहीं आता। अब तो मजा आता है कि मिट जायें...

मिल जाय कोई पीर-फकीर, पहुँचा दे भवपार।

जीवन की शाम हो जाय उसके पहले अपने जीवनतत्त्व में विश्रांति मिल जाय बस ! अब 'फलानी जगह का यह चेयरमैन है, फलाने का यह है...'- यह सब देख लिया खिलवाड़। अपने को सता के देख लिया, खपा के देख लिया। अभी देखना बाकी है तो फिर जरा करके देख लो। अब तक तो करके देख लिया आजीवन। अनुभवी आदमी एक थप्पड़ से चेत जाता है, नहीं तो फिर दूसरा मिलता है, तीसरा मिलता है। संसार में प्रकृति थप्पड़ मार-मार के भी तुम्हें परमेश्वर-पद में पहुँचाना चाहती है। अगर समझ के पहुँचते हो तो आराम से तुम्हें खेलते-कूदते ले जाने के लिए वह प्रकृति देवी तैयार है। नहीं मानते हो, मोह-ममता करते हो तो वह चीज छीन के, थप्पड़ मार के भी तुमको जगाने के लिए उत्सुक रहती है वह महामाया, क्योंकि वह है तो आखिर परमेश्वर की आह्लादिनी शक्ति ! कोई तुम्हारे शत्रु की तो है नहीं। माया कहो, प्रकृति कहो, है तो परमेश्वर की आह्लादिनी शक्ति, है तो उसीका अभिन्न अंग ! जैसे जल की चाहे कैसी भी तरंगें हों सागर में, है तो जल का ही विवर्त। परिणाम नहीं विवर्त, परिणाम तो बदल जाता है, विवर्त नहीं बदलता। जैसे दही दूध का परिणाम है, ऐसे ही भगवान का परिणाम जगत नहीं है; भगवान का विवर्त है जगत। **वस्तु में अपने मूल स्वभाव को छोड़े बिना ही अन्य वस्तु की प्रतीति होना यह 'विवर्त' है।** सीपी में रूपा दिखना, रस्सी में साँप दिखना विवर्त है।

ताना बुनते हैं न सूत का, तो कपड़े के एक छेड़े से दूसरे छेड़े तक अनेक आड़े-सीधे, गोलाकार, चौरसाकार या लम्बचौरस, जो भी तानाबुनी है सब सूत-ही-सूत होता है। ऐसे ही जगत में जो भी कुछ तानाबुनी है, सब ब्रह्म-ही-ब्रह्म की है। फिर मृत्यु कहाँ है ? जन्म भी कहाँ है ? अपना कहाँ ? पराया कहाँ ?

एक जगह महात्मा गांधी का सूत के कपड़े में सूत का बुना हुआ चित्र देखा गया। अब महात्मा गांधी की वह चप्पल भी सूत है तो हाथ में डंडा भी सूत है और आँख पर चश्मा भी सूत है, जो धोती पहनी है वह भी सूत है और जो हड्डियाँ दिख रही हैं वे भी सूत-ही-सूत हैं। ऐसे ही सब ब्रह्म-ही-ब्रह्म है।

खाँड़ का खिलौना-राजा बना है और

ज्ञान की दृष्टि बना लो

(ज्ञानसिंधु पूज्य बापूजी की अमृतवाणी)

जान लिया कीचड़ में कोई सार नहीं, जान लिया तरंग बनकर किनारों से टकराने में सार नहीं, अब तो मुझे जलराशि में ही अच्छा लगता है। भीड़भाड़ में विकारी लोगों के बीच रहना अच्छा नहीं लगता। एकांत में या तो फिर भगवान की मस्ती में जीनेवाले मस्त साधकों के बीच रहना अच्छा लगता है, बाकी फिर हमें और कहीं अच्छा नहीं लगता। अब इन्द्रियों के प्रदेश में ज्यादा जीना, घूमना अच्छा नहीं लगता। इन्द्रियातीत आत्मभाव में, आत्मज्ञान में ही सुख का अनुभव है। 'आओ सेठ ! बैठो सेठ ! फलाना सेठ !'- ऐसे लोगों के पास अब सेठपने के अहं को पोसने में मजा नहीं आता। अब तो मजा आता है कि मिट जायें...

मिल जाय कोई पीर-फकीर, पहुँचा दे भवपार।

जीवन की शाम हो जाय उसके पहले अपने जीवनतत्त्व में विश्रांति मिल जाय बस ! अब 'फलानी जगह का यह चेयरमैन है, फलाने का यह है...'- यह सब देख लिया खिलवाड़। अपने को सता के देख लिया, खपा के देख लिया। अभी देखना बाकी है तो फिर जरा करके देख लो। अब तक तो करके देख लिया आजीवन। अनुभवी आदमी एक थप्पड़ से चेत जाता है, नहीं तो फिर दूसरा मिलता है, तीसरा मिलता है। संसार में प्रकृति थप्पड़ मार-मार के भी तुम्हें परमेश्वर-पद में पहुँचाना चाहती है। अगर समझ के पहुँचते हो तो आराम से तुम्हें खेलते-कूदते ले जाने के लिए वह प्रकृति देवी तैयार है। नहीं मानते हो, मोह-ममता करते हो तो वह चीज छीन के, थप्पड़ मार के भी तुमको जगाने के लिए उत्सुक रहती है वह महामाया, क्योंकि वह है तो आखिर परमेश्वर की आह्लादिनी शक्ति ! कोई तुम्हारे शत्रु की तो है नहीं। माया कहो, प्रकृति कहो, है तो परमेश्वर की आह्लादिनी शक्ति, है तो उसीका अभिन्न अंग ! जैसे जल की चाहे कैसी भी तरंगें हों सागर में, है तो जल का ही विवर्त। परिणाम नहीं विवर्त, परिणाम तो बदल जाता है, विवर्त नहीं बदलता। जैसे दही दूध का परिणाम है, ऐसे ही भगवान का परिणाम जगत नहीं है; भगवान का विवर्त है जगत। **वस्तु में अपने मूल स्वभाव को छोड़े बिना ही अन्य वस्तु की प्रतीति होना यह 'विवर्त' है।** सीपी में रूपा दिखना, रस्सी में साँप दिखना विवर्त है।

ताना बुनते हैं न सूत का, तो कपड़े के एक छेड़े से दूसरे छेड़े तक अनेक आड़े-सीधे, गोलाकार, चौरसाकार या लम्बचौरस, जो भी तानाबुनी है सब सूत-ही-सूत होता है। ऐसे ही जगत में जो भी कुछ तानाबुनी है, सब ब्रह्म-ही-ब्रह्म की है। फिर मृत्यु कहाँ है ? जन्म भी कहाँ है ? अपना कहाँ ? पराया कहाँ ?

एक जगह महात्मा गांधी का सूत के कपड़े में सूत का बुना हुआ चित्र देखा गया। अब महात्मा गांधी की वह चप्पल भी सूत है तो हाथ में डंडा भी सूत है और आँख पर चश्मा भी सूत है, जो धोती पहनी है वह भी सूत है और जो हड्डियाँ दिख रही हैं वे भी सूत-ही-सूत हैं। ऐसे ही सब ब्रह्म-ही-ब्रह्म है।

खाँड़ का खिलौना-राजा बना है और

महाराज ! ताज पहना है, रथ पर बैठा है । वाइसराय बना है, ट्रेन के प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बैठा है, टोपा पहना है । अब महाराज ! टिकट चेकर भी बना है खाँड़ का । उस वाइसराय को थप्पड़ मारकर उसका टोपा तोड़ दो और मुँह में डालो तो स्वाद खाँड़ का आयेगा, राजा के ताज को मुँह में डालो तो स्वाद खाँड़ का आयेगा और टिकट चेकर का टिकट माँगने का हाथ उठा के मुँह में डाल दो तो भी स्वाद खाँड़ का ही आयेगा। उन खिलौनों में से घोड़ा, गधा, कुत्ता, बिल्ला, ऊँट, हाथी, साहब-साहिबा... कोई भी मुँह में डालो तो स्वाद खाँड़ का आयेगा । ऐसे ही ब्रह्मज्ञान की दृष्टि बना लो, फिर जहाँ भी दृष्टि जायेगी परमेश्वर का ही ब्रह्मानंद आयेगा । जिसको एक जगह अपना प्रियतम, प्रिय मिलता है तो कितना आनंदित होता है! कभी-कभी अपना प्रिय मिलता है, अपनी प्रिय वस्तु मिलती है, प्रिय व्यक्ति मिलता है, प्रिय जगह मिलती है तो कितना सुखद लगता है ! ज्ञानी को तो सब जगह अपना परम प्रिय मिलता रहता है, इसलिए वे परमानंद में मस्त रहते हैं । ज्ञान से तो आपको सदा-सर्वत्र प्रिय-ही-प्रिय मिलेगा, जबकि वस्तुओं में तो कभी प्रिय वस्तु मिली तो भी छूट जायेगी । प्रिय वस्तु भोगते-भोगते शरीर दुर्बल हो जायेगा, निराशा आ जायेगी लेकिन ज्ञान की दृष्टि जगी, प्रेम की सरिता बही तो आपको सर्वत्र अपना प्यारा-ही-प्यारा दिखेगा ।

एक आदमी जो अपने-आपको विषय-विकार-विलास में, सम्पूर्ण शरीर के सुखों में खर्च रहा है वह भी गलत जगह पर है, गलत जगह पर उसके पैर पड़े हैं । भविष्य उसका दुःखद और अंधकारमय होगा । दूसरा आदमी वह है जो सब कुछ छोड़कर निर्जन जंगल में रहता है । अपने शरीर को सुखाता है, मन को तपाता है, 'संसार खराब है, यह मायाजाल है... यह ऐसा है, यह वैसा है... इससे बचो'- ऐसा करके जो बिल्कुल त्याग करता है, ज्ञानसहित नहीं लेकिन एक धारा में बहते हुए त्याग करता है, वह भी कहीं गलत रास्ते की यात्रा करता है । बुद्धिमान तो वह है कि जो सबमें सब होकर बैठा है उस सर्वाधिष्ठान पर दृष्टि डाले । मोह-ममता का त्याग, संकीर्णता का त्याग, अहंकार का त्याग, उद्वेग-आवेश का त्याग... और वह त्याग तब सिद्ध होगा जब ज्ञान की दृष्टि से देखोगे, संकीर्णता मिटेगी । परमात्मा की दृष्टि से देखोगे तो मोह-ममता मिटेगी और सर्वेश्वर के ज्ञान से पल्लवित, पावन होकर तुम्हारा हृदय और मस्तिष्क जब तालबद्ध होंगे, तब तुम सब कुछ देते, लेते, खाते महात्यागी और महाभोगी, महान एकांती और महान-महान प्रवृत्ति करनेवाले - दोनों की अनुभूतियाँ एक साथ करोगे।

त्यागी एक अलग छोर पर है, भोगी दूसरे छोर पर है लेकिन बुद्धिमान, ज्ञानवान, सत्शिष्य और साधक त्याग और भोग दोनों को साधन बनाकर जिससे त्याग और भोग दिखते हैं उस परम पद में जग जाते हैं । **त्याग भोग जाके नहीं, सो विद्वान अरोग ।** भोग का रोग भी नहीं और त्याग का आवेश भी नहीं, ऐसे जो ज्ञानी हैं वे विद्वान निरोग होते हैं । 'मैं त्यागी हूँ'- ऐसा भाव भी जिनको नहीं है, 'मैं भोगी हूँ'- ऐसा भाव भी जिनको नहीं है, जो भोग और त्याग दोनों को इन्द्रियों का खिलवाड़ समझते हैं, मन का फुरना समझते हैं और सर्वत्र व्याप्त अपने सर्वेश्वर की सत्ता को अपने से अभिन्न मानते हैं, ऐसे धीर ज्ञानी के जो सत्शिष्य होते हैं, वे हर हाल में, हर परिस्थिति में सुखद अनुभव, सुखद दृष्टि पा लेते हैं । ☐

संकल्पशक्ति का प्रतीक : रक्षाबंधन

✻ रक्षाबंधन : २४ अगस्त ✻

(पूज्य बापूजी के सत्संग-अमृत से)

भारतीय संस्कृति का रक्षाबंधन-महोत्सव, जो श्रावणी पूनम के दिन मनाया जाता है, आत्मनिर्माण, आत्मविकास का पर्व है। आज के दिन पृथ्वी ने मानो हरी साड़ी पहनी है, सुंदर पुष्प खिले हैं। अपने हृदय को भी प्रेमाभक्ति से, सदाचार-संयम से पूर्ण करने के लिए प्रोत्साहित करनेवाला यह पर्व है।

आज रक्षाबंधन के पर्व पर बहन भाई को आयु, आरोग्य और पुष्टि की वृद्धि की भावना से राखी बाँधती है। अपना उद्देश्य ऊँचा बनाने का संकल्प लेकर ब्राह्मण लोग जनेऊ बदलते हैं। समुद्र का तूफानी स्वभाव श्रावणी पूनम के बाद शांत होने लगता है। इससे जो समुद्री व्यापार करते हैं, वे नारियल फोड़ते हैं।

रक्षाबंधन का उत्सव श्रावणी पूनम को ही क्यों रखा गया ? भारतीय संस्कृति में संकल्पशक्ति के सदुपयोग की सुंदर व्यवस्था है। ब्राह्मण कोई शुभ कार्य कराते हैं तो कलावा (रक्षासूत्र) बाँधते हैं ताकि आपके शरीर में छुपे दोष या कोई रोग, जो आपके शरीर को अस्वस्थ कर रहे हों, उनके कारण आपका मन और बुद्धि भी निर्णय लेने में थोड़े अस्वस्थ न रह जायें। सावन के महीने में सूर्य की किरणें धरती पर कम पड़ती हैं, किस्म-किस्म के जीवाणु बढ़ जाते हैं, जिससे किसीको दस्त, किसीको उलटियाँ, किसीको अजीर्ण, किसीको बुखार हो जाता है तो किसीका शरीर टूटने लगता है। इसलिए रक्षाबंधन के दिन रक्षासूत्र बाँधकर तन-मन-मति की स्वास्थ्य-रक्षा का संकल्प किया जाता है। रक्षासूत्र में कितना मनोविज्ञान है, कितना रहस्य है !

अपना शुभ संकल्प और शरीर के ढाँचे की व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए यह श्रावणी पूनम का रक्षाबंधन महोत्सव है।

'आज के दिन रक्षासूत्र बाँधने से वर्ष भर रोगों से हमारी रक्षा रहे, बुरे भावों से रक्षा रहे, बुरे कर्मों से रक्षा रहे'- ऐसा एक-दूसरे के प्रति सत्संकल्प करते हैं। रक्षाबंधन के दिन बहन भैया के ललाट पर तिलक-अक्षत लगाकर संकल्प करती है कि 'जैसे शिवजी त्रिलोचन हैं, ज्ञानस्वरूप हैं, वैसे ही मेरे भाई में भी विवेक-वैराग्य बढ़े, मोक्ष का ज्ञान, मोक्षमय प्रेमस्वरूप ईश्वर का प्रकाश आये। मेरा भाई इस सपने जैसी दुनिया को सच्चा मानकर न उलझे, मेरा भैया साधारण चर्मचक्षुवाला न हो, दूरद्रष्टा हो। **'क्षणे रुष्टः क्षणे तुष्टः'** न हो, जरा-जरा बात में भड़कनेवाला न हो, धीर-गम्भीर हो। मेरे भैया की सूझबूझ, यश, कीर्ति और ओज-तेज अक्षुण्ण रहें।' भैया को राखी बाँधी और मुँह मीठा किया,

भाई गद्गद हो गया ।

बहन का शुभसंकल्प होता है और भाई का बहन के प्रति सद्भाव होता है। भैया को भी बहन के लिए कुछ करना चाहिए। अभी तो चलो साड़ी, वस्त्र या कुछ दक्षिणा दे दी जाती है परंतु यह रक्षाबंधन-महोत्सव दक्षिणा या कोई चीज देने से वहीं सम्पन्न नहीं हो जाता । आपने बहन की शुभकामना ली है तो आप भी बहन के लिए शुभ भाव रखें कि 'अगर मेरी बहन के ऊपर कभी भी कोई कष्ट, विघ्न-बाधा आये तो भाई के नाते बहन के कष्ट में दौड़कर पहुँच जाना मेरा कर्तव्य है ।' बहन की धन-धान्य, इज्जत की दृष्टि से तो रक्षा करे, साथ ही बहन का चरित्र उज्ज्वल रहे ऐसा भाई सोचे और भाई का चरित्र उज्ज्वल बने ऐसा सोचकर बहनें अपने मन को काम में से राम की तरफ ले जायें। इस भाई-बहन के पवित्र भाव को उजागर करके न जाने कितने लोगों ने युद्ध टाल दिये, कितनी नरसंहार की कुचेष्टाएँ इस धागे ने बचा लीं ।

सर्वरोगोपशमनं सर्वाशुभविनाशनम् ।
सकृत्कृते नाब्दमेकं येन रक्षा कृता भवेत् ॥

'इस पर्व पर धारण किया हुआ रक्षासूत्र सम्पूर्ण रोगों तथा अशुभ कार्यों का विनाशक है। इसे वर्ष में एक बार धारण करने से वर्ष भर मनुष्य रक्षित हो जाता है ।' **(भविष्य पुराण)**

यह पर्व समाज के टूटे हुए मनों को जोड़ने का सुंदर अवसर है । इसके आगमन से कुटुम्ब में आपसी कलह समाप्त होने लगते हैं, दूरी मिटने लगती है, सामूहिक संकल्पशक्ति साकार होने लगती है ।

श्रावणी पूर्णिमा अर्थात् रक्षाबंधन-महोत्सव बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। हजार-दो हजार वर्ष, पाँच हजार वर्ष, लाख-दो लाख वर्ष नहीं, करोड़ों वर्ष प्राचीन है यह उत्सव । देव-दानव युद्ध में वर्षों के युद्ध के बाद भी निर्णायक परिस्थितियाँ नहीं आ रही थीं, तब इन्द्र ने गुरु बृहस्पतिजी से कहा कि 'युद्ध से भागने की भी स्थिति नहीं है और युद्ध में डटे रहना भी मेरे बस का नहीं है। गुरुवर ! आप ही बताओ क्या करें ?' इतने में इन्द्र की पत्नी शचि ने कहा : ''पतिदेव ! कल मैं आपको अपने संकल्प-सूत्र में बाँधूँगी ।''

ब्राह्मणों के द्वारा वेदमंत्र का उच्चारण हुआ, ॐकार का गुंजन हुआ और शचि ने अपना संकल्प जोड़कर वह सूत्र इन्द्र की दायीं कलाई में बाँध दिया तो इन्द्र का मनोबल, निर्णयबल, भावबल, पुण्यबल बढ़ गया। उस संकल्पबल ने ऐसा जौहर दिखाया कि इन्द्र दैत्यों को परास्त करके देवताओं को विजयी बनाने में सफल हो गये ।

सब कुछ देकर त्रिभुवनपति को अपना द्वारपाल बनानेवाले बलि को लक्ष्मीजी ने राखी बाँधी थी। राखी बाँधनेवाली बहन अथवा हितैषी व्यक्ति के आगे कृतज्ञता का भाव व्यक्त होता है। राजा बलि ने पूछा : ''तुम क्या चाहती हो ?'' लक्ष्मीजी ने कहा : ''वे जो तुम्हारे नन्हे-मुन्ने द्वारपाल हैं, उनको आप छोड़ दो ।''

भक्त के प्रेम से वश होकर जो द्वारपाल की सेवा करते हैं, ऐसे भगवान नारायण को द्वारपाल के पद से छुड़ाने के लिए लक्ष्मीजी ने भी रक्षाबंधन-महोत्सव का उपयोग किया ।

बहनें इस दिन ऐसा संकल्प करके रक्षासूत्र बाँधें कि 'हमारे भाई भगवत्प्रेमी बनें ।' और भाई सोचें कि 'हमारी बहन भी चरित्रप्रेमी, भगवत्प्रेमी बने ।' अपनी सगी बहन व पड़ोस की बहन के लिए अथवा अपने सगे भाई व पड़ोसी भाई के प्रति ऐसा सोचें। आप दूसरे के लिए भला सोचते हो तो आपका भी भला हो जाता है। संकल्प में बड़ी शक्ति होती है। अतः आप ऐसा संकल्प करें कि हमारा आत्मस्वभाव प्रकटे । ❐

भाई गद्‌गद हो गया।

बहन का शुभसंकल्प होता है और भाई का बहन के प्रति सद्‌भाव होता है। भैया को भी बहन के लिए कुछ करना चाहिए। अभी तो चलो साड़ी, वस्त्र या कुछ दक्षिणा दे दी जाती है परंतु यह रक्षाबंधन-महोत्सव दक्षिणा या कोई चीज देने से वहीं सम्पन्न नहीं हो जाता। आपने बहन की शुभकामना ली है तो आप भी बहन के लिए शुभ भाव रखें कि 'अगर मेरी बहन के ऊपर कभी भी कोई कष्ट, विघ्न-बाधा आये तो भाई के नाते बहन के कष्ट में दौड़कर पहुँच जाना मेरा कर्तव्य है।' बहन की धन-धान्य, इज्जत की दृष्टि से तो रक्षा करे, साथ ही बहन का चरित्र उज्ज्वल रहे ऐसा भाई सोचे और भाई का चरित्र उज्ज्वल बने ऐसा सोचकर बहनें अपने मन को काम में से राम की तरफ ले जायें। इस भाई-बहन के पवित्र भाव को उजागर करके न जाने कितने लोगों ने युद्ध टाल दिये, कितनी नरसंहार की कुचेष्टाएँ इस धागे ने बचा लीं।

सर्वरोगोपशमनं सर्वाशुभविनाशनम्।
सकृत्कृते नाब्दमेकं येन रक्षा कृता भवेत्॥

'इस पर्व पर धारण किया हुआ रक्षासूत्र सम्पूर्ण रोगों तथा अशुभ कार्यों का विनाशक है। इसे वर्ष में एक बार धारण करने से वर्ष भर मनुष्य रक्षित हो जाता है।' **(भविष्य पुराण)**

यह पर्व समाज के टूटे हुए मनों को जोड़ने का सुंदर अवसर है। इसके आगमन से कुटुम्ब में आपसी कलह समाप्त होने लगते हैं, दूरी मिटने लगती है, सामूहिक संकल्पशक्ति साकार होने लगती है।

श्रावणी पूर्णिमा अर्थात् रक्षाबंधन-महोत्सव बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। हजार-दो हजार वर्ष, पाँच हजार वर्ष, लाख-दो लाख वर्ष नहीं, करोड़ों वर्ष प्राचीन है यह उत्सव। देव-दानव युद्ध में वर्षों के युद्ध के बाद भी निर्णायक परिस्थितियाँ नहीं आ रही थीं, तब इन्द्र ने गुरु बृहस्पतिजी से कहा कि 'युद्ध से भागने की भी स्थिति नहीं है और युद्ध में डटे रहना भी मेरे बस का नहीं है। गुरुवर ! आप ही बताओ क्या करें ?' इतने में इन्द्र की पत्नी शचि ने कहा : ''पतिदेव ! कल मैं आपको अपने संकल्प-सूत्र में बाँधूँगी।''

ब्राह्मणों के द्वारा वेदमंत्र का उच्चारण हुआ, ॐकार का गुंजन हुआ और शचि ने अपना संकल्प जोड़कर वह सूत्र इन्द्र की दायीं कलाई में बाँध दिया तो इन्द्र का मनोबल, निर्णयबल, भावबल, पुण्यबल बढ़ गया। उस संकल्पबल ने ऐसा जौहर दिखाया कि इन्द्र दैत्यों को परास्त करके देवताओं को विजयी बनाने में सफल हो गये।

सब कुछ देकर त्रिभुवनपति को अपना द्वारपाल बनानेवाले बलि को लक्ष्मीजी ने राखी बाँधी थी। राखी बाँधनेवाली बहन अथवा हितैषी व्यक्ति के आगे कृतज्ञता का भाव व्यक्त होता है। राजा बलि ने पूछा : ''तुम क्या चाहती हो ?'' लक्ष्मीजी ने कहा : ''वे जो तुम्हारे नन्हे-मुन्ने द्वारपाल हैं, उनको आप छोड़ दो।''

भक्त के प्रेम से वश होकर जो द्वारपाल की सेवा करते हैं, ऐसे भगवान नारायण को द्वारपाल के पद से छुड़ाने के लिए लक्ष्मीजी ने भी रक्षाबंधन-महोत्सव का उपयोग किया।

बहनें इस दिन ऐसा संकल्प करके रक्षासूत्र बाँधें कि 'हमारे भाई भगवत्प्रेमी बनें।' और भाई सोचें कि 'हमारी बहन भी चरित्रप्रेमी, भगवत्प्रेमी बने।' अपनी सगी बहन व पड़ोस की बहन के लिए अथवा अपने सगे भाई व पड़ोसी भाई के प्रति ऐसा सोचें। आप दूसरे के लिए भला सोचते हो तो आपका भी भला हो जाता है। संकल्प में बड़ी शक्ति होती है। अतः आप ऐसा संकल्प करें कि हमारा आत्मस्वभाव प्रकटे। ❑

अंधकार में अवतार लिया प्रकाशमय जग को किया

*** श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी : २ सितम्बर ***

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी की रात... बारिश हो रही है और वसुदेव-देवकी कारागार में हैं... उनके रिश्तेदार भय और आतंक से आतंकित हैं, दुःख में हैं, शोषित हो रहे हैं। ऐसों के यहाँ आने के लिए भगवान श्रीकृष्ण मध्यरात्रि, अँधेरी रात चुनते हैं। अंधकार में पड़े हुए जीव के यहाँ, साधक के यहाँ प्रकाशमय श्रीकृष्ण, दुःख में डूबे हुए समाज के यहाँ सुखस्वरूप श्रीकृष्ण, विषाद में पड़े हुए लोगों के बीच, माधुर्य बरसानेवाले कृष्ण का अवतरण होता है। कहाँ होता है ? जेल में। किसके यहाँ होता है ? वसुदेव-देवकी के यहाँ।

शुद्ध बुद्धि का नाम है देवकी और सत्त्वमय प्रकाश का नाम है वसुदेव। इस जीव का सत्त्वमय प्रकाश हो और शुद्ध बुद्धि हो तो इसके हृदय में भी श्रीकृष्ण का अवतरण होता है, प्रागट्य होता है। कृष्ण का प्रागट्य तो वसुदेव-देवकी के यहाँ होता है परंतु पोषण होता है नंद-यशोदा के यहाँ। वसुदेवजी कृष्ण को ले गये और यशोदा की गोद में रख दिया। यशोदा सोयी है, न माला कर रही है, न इंतजार कर रही है; सोयी हुई यशोदा के पास कृष्ण पहुँचते हैं। अपने लीला-माधुर्य में सराबोर करने के लिए श्रीकृष्ण क्या करते हैं ? रोते हैं।

यशोदा के यहाँ शक्ति का, माया का जन्म हुआ है और वसुदेव-देवकी के यहाँ आनंद का प्रागट्य हुआ है। शक्तिवाले सोते रहते हैं और आनंदवाले जागते और जगानेवाले को छुड़ाने का काम करते हैं। वसुदेवजी माया को ले गये। कृष्ण ने ऊवाँऽऽऽ...ऊवाँऽऽऽ करके मैया को जगाया कि 'मैं आया हूँ तेरे घर, अब तू कब तक सोयेगी ?' सोये हुए को जगाना यह भगवान का भगवद्पना है। असाधनवाले को भी सहज में मिलना यह भगवान का भगवद्पना है।

जन्माष्टमी के दिन किया हुआ जप अनंत गुना फल देता है। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से पूछा : ''जन्माष्टमी के उपवास से क्या फायदा होता है ?'' श्रीकृष्ण बोले : ''उस व्यक्ति के जीवन में धन-धान्य, यश की कमी नहीं रहेगी।'' जन्माष्टमी के दिन अगर कोई संसार-व्यवहार करता है तो विकलांग संतान होगी अथवा तो जानलेवा बीमारी पकड़ लेती है।

श्रीकृष्ण मथुरा जा रहे हैं तो सड़कों पर लोग दायें-बायें खड़े हैं और उनके रूप-लावण्य, माधुर्य, उनकी चितवन का आनंद ले रहे हैं। लोग तो कृष्ण को देखकर गद्‌गद हो रहे हैं पर कृष्ण एक कुबड़ी स्त्री पर टिकटिकी लगाये हुए हैं। उसका नाम है कुब्जा, वह कंस के पास अंगराग लेकर जा रही है। कृष्ण बोलते हैं : ''ओ सुंदरी !''

उस कुरूपा में भी सौंदर्य देखनेवाला कैसा है तुम्हारा अकालपुरुष ब्रह्म ! कुब्जा ने सोचा कि 'किसी सुंदरी को बुलाते होंगे, मैं तो कुब्जा हूँ।' अनसुना करके खबुर-खबुर जूतियाँ घसीटती हुई धूल उड़ाती जा रही है। श्रीकृष्ण ने फिर से आवाज लगायी : ''ओ सुंदरी !'' उसने देखा कि यहाँ तो

छोरे-छोरे हैं, कोई छोरी तो है नहीं ! वह आगे बढ़ी । श्रीकृष्ण ने फिर से प्रेम में भरकर कहा : ''ओ सुंदरी !'' अब उसका छुपा हुआ प्रेमस्वभाव छलका, उसने कहा : ''बोलो सुंदर !''

कृष्ण बोले : ''यह अंगराग मुझे दोगी ?''

बोली : ''हाँ ! लो, लगा लो-लगा लो।''

बात बन गयी । कुछ-न-कुछ दिये बिना जीव कैसे मुझे पायेगा ! अंगराग माँग लिया । विश्व को देनेवाले वे दाता अंगराग लगानेवाली एक साधारण कुब्जा-कुरूपा, कुबड़ी को बोलते हैं : ''ए सुंदरी !'' और वह कृष्ण को बोलती है : ''बोलो सुंदर !'' काम बन गया !

श्रीकृष्ण बताते हैं कि प्रेम ही विश्व में राज्य करता है । स्वामी रामतीर्थ बोलते थे यह कायदा-कानून तो अपने अधिकार की रक्षा और दूसरे का शोषण करने का एक राजमार्ग है । डण्डे के बल से, आतंक के बल से जो करवाया जाता है, वह लोग बेचारे मजबूरन करते हैं परंतु समाज में अगर अब भी कुछ सच्चाई और व्यवस्था है तो वह प्रेम के बल से है । माँ बच्चे को प्रेम से पालती-पोसती है । बच्चा भी कर्तव्य समझकर प्रेम से माँ-बाप, गुरु या समाज की सेवा करता है । संत कबीरजी कहते हैं :

प्रेम न खेतों ऊपजे प्रेम न हाट बिकाय ।
राजा चहो प्रजा चहो शीश (अहं) दिये ले जाय ॥

और तुम्हारा वास्तविक स्वभाव प्रेम है । प्रेम जब धन में फँसता है तो लोभ बनता है, परिवार में फँसता है तो मोह बनता है, शरीर की अहंता में फँसता है तो अहंकार बनता है । प्रेम अगर किसी नाम-रूप में उलझता है तो मायामय बनकर फँसाता है और प्रेम को अगर शुद्ध-बुद्ध रूप में देखा जाय तो वह परमात्मा ही है ।

अंगराग लिया और उसके पैर पर पैर रखके ठोड़ी को यूँ झटका मारा तो सचमुच वह कुबड़ी सुंदरी हो गयी । कृष्ण-कन्हैया लाल की जय !

भगवान का भगवानपना केवल अवतारकाल में ही नहीं था, वह अब भी है । हमारा भगवान वह नहीं जो कभी हो और कभी न हो, कहीं हो और कहीं न हो, किसीमें हो और किसीमें न हो; उसको भारतवासी पूर्ण परमात्मा नहीं मानते । आया और चला गया, फिर नहीं है उसको हम भगवान नहीं मानते । भगवान तो हम उनको मानते हैं जो पहले थे, अभी हैं और बाद में रहेंगे । कभी साकार रूप में विशेष लीला करने के लिए प्रेमावतार में आ गये, मर्यादा-अवतार में आ गये, कच्छप-अवतार में आ गये, मत्स्य-अवतार में आ गये और सर्वत्र ज्यों के त्यों भरपूर भी रहे... जिस-जिस अवतार में जितनी बुद्धि, योग्यता और सामर्थ्य की आवश्यकता होती है, उतना ही प्रगट करते हैं और फिर वह अवतार अंतर्धान हो जाता है, फिर भी भगवान सबमें रहते हैं । जैसे कहीं-कहीं छोटी तरंग, कहीं बड़ी, कहीं बहुत बड़ी तरंग... फिर भी समुद्र में पानी ही तो व्याप रहा है ।

जीवन केवल समस्याएँ और उनके समाधान के लिए नहीं है । जीवन हास्य के लिए, विनोद के लिए, आनंद के लिए, माधुर्य के लिए, अपने सुखस्वभाव को छलकाने के लिए है और अंतरात्मा में विश्रांति पाने के लिए है । श्रीकृष्ण के पास गंधर्व-विद्या है । उसमें वाद्ययंत्र भी होता है, गायन और नृत्य भी होता है । वाद्य में भी बंसी सर्वोपरि है तो उसको बजानेवाले श्रीकृष्ण भी सर्वोपरि हैं ।

श्रीकृष्ण ने इतना मन लगाकर चार वेद, चार उपवेद का ज्ञान पाया कि उनके ज्ञान की थोड़ी-सी छटा है, जो गीता होकर विश्ववंदनीय हो रही है । ऐसे श्रीकृष्ण के अवतरण का दिवस है जन्माष्टमी-महोत्सव ।

आप कभी यह नहीं मानना कि वे दूर हैं, दुर्लभ हैं, परिश्रम से मिलेंगे, पराये हैं, कुछ साधन

होगा, कुछ तपस्या होगी, कुछ क्या-क्या होगा तब मिलेंगे... नहीं-नहीं । **सो साहिब सद सदा हजूरे, अंधा जानत ताको दूरे ।** श्रीकृष्ण सुबह उठते हैं तो शांत भाव में रहते हैं । वे तुम्हें प्रेरणा देते हैं कि प्रातः उठते ही अपने आत्मस्वभाव में, आनंद-स्वभाव में, शांतस्वभाव में संकल्परहित स्थिति में टिके रहो । जिसको जाना है उसका आदर करो, जिसको माना है उसमें दृढ़ श्रद्धा करो । करने की शक्ति का, जानने की शक्ति का, मानने की शक्ति का ठीक सदुपयोग करो ।

गुरु की वाणी वाणी गुर, वाणी विच अमृत सारा ।

भगवान ने गुरुरूप में अर्जुन को तत्त्वज्ञान का उपदेश दिया और अर्जुन ने स्थिति पायी । अर्जुन कहता है : **नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा ।** तो गीता के ज्ञान से ही आम आदमी को यह संदेशा मिलता है कि भगवान के साकार दर्शन के बाद भी जब भगवद्-तत्त्व का ज्ञान देनेवाले गुरु हमको मिलें अथवा भगवान गुरु की भूमिका अदा करें, तब हम दुःखों से बचते हैं । इसलिए कहते हैं :

गुरुकृपा हि केवलं शिष्यस्य परं मंगलम् ।

मंगल तो देवता की कृपा से हो जायेगा, तपस्या से हो जायेगा, किसीके वरदान से हो जायेगा, किसीके साथ-सहयोग से हो जायेगा परंतु परम मंगल तो सद्गुरु के, साक्षात्कारी महापुरुष के ज्ञान से ही होगा । श्रीकृष्ण ऐसे सद्गुरु हैं, ऐसे महापुरुष हैं ।

जो विद्या अरण्य में दी जाती है वह युद्ध के मैदान में श्रीकृष्ण ने बंसी बजाते हुए दी है । वीर अर्जुन को भी उस 'गीता' का प्रसाद मिलता है और भक्त संजय को भी मिलता है । बाहर से और भीतर से जो अंधे हैं धृतराष्ट्र... बाहर से आँखें नहीं हैं और भीतर से ऐसी ममता है कि भीतर से भी कुछ सूझता नहीं है, उन्हें भी गीता का प्रसाद मिला है ।

वैदिक धर्म में प्रार्थनाएँ हैं, मंदिर में प्रार्थनाएँ करते हैं, यकीन-श्रद्धा है, करुणा भी है, अहिंसा भी है किंतु एक खास बात है - विशेषता यह है कि इसमें हित की प्रधानता है । अगर उँगली कटाने से हाथ बच जाता है तो उँगली काटो । अगर हाथ कटाने से शरीर बच जाता है तो हाथ कटाओ। दुर्योधन को मारने से मानवता की रक्षा होती है तो दुर्योधन को पहुँचाओ । अर्जुन कहता है कि 'मैं भिक्षा माँगकर खाऊँगा, युद्ध नहीं करूँगा ।' कृष्ण ने प्रोत्साहित किया कि 'जो आततायी हैं, जो निर्दोषों को सताते हैं और फिर मानते नहीं हैं, ऐसे लोगों को दण्ड देना क्षत्रिय का कर्तव्य है ।'

कर्तव्यता में देखो तो कृष्ण पूर्ण ! केवल कर्तव्य, नृत्य, हास्य-विनोद है ऐसा नहीं, वैराग्य भी उनमें पूर्ण है । भगवान के छः-के-छः ऐश्वर्य कृष्ण-अवतार में छलकते हैं । बारह साल वृंदावन में रहे फिर मथुरा गये तो कभी मुड़कर वृंदावन नहीं आये । नहीं तो ललनाएँ तरस रही हैं, लाले पुकार रहे हैं... कैसा वैराग्य ! गोवर्धन उठाने का ऐश्वर्य भी भगवान में है । धर्म-अनुष्ठान करते हैं, धर्म भी पूर्ण है। यश भी पूर्ण है । अर्जुन और उद्धव जैसों को ज्ञान देने का सामर्थ्य श्रीकृष्ण में है ।

अमीरी की तो ऐसी की, सब जर लुटा बैठे ।
फकीरी की तो ऐसी की, ज्ञान के द्वार आ बैठे ।।

जीवन में लोलुपता का अभाव, भय का, शुष्कता का अभाव देखना है तो श्रीकृष्ण के जीवन में देखो । श्रीकृष्ण के बेटे उनकी बात नहीं मानते और कभी उनके मुँह पर सुना भी देते हैं किंतु कृष्ण उदास नहीं होते । आज साधारण सेठ का बेटा नहीं मानता तो सेठ कहता है : 'मैं तो मर गया ! दो छोकरे तो मानते हैं पर तीसरा ऐसा है ।' आँसू बहा रहे हैं... दो मान रहे हैं उसकी खुशी में तू बंसी बजा । श्रीकृष्ण के बेटे तो मानते

ही नहीं थे। साधु-संत आते, अरे ! भीम जैसे आते, युधिष्ठिर आते तो श्रीकृष्ण खड़े हो जाते, ऐसे शिष्टाचार के धनी। और श्रीकृष्ण के छोरे तो साधु-संत जा रहे थे तो उनकी मखौल उड़ाने के लिए एक लड़के को तसला बाँध के, अंदर मूसल रख के महिला का पहनावा पहना के बोले : ''महाराज ! यह गर्भवती है। इसको बेटा होगा कि बेटी ?'' संत बोले : ''न बेटा आयेगा, न बेटी आयेगी, तुम्हारा नाश करनेवाला आयेगा।'' लो ! इन शैतानों की शैतानियत समाज को दुःख देगी इसलिए अपने होते-होते अपने बेटों को भी ऋषियों के द्वारा रवाना करते हैं। कैसा वैराग्य ! कैसा समाज के हित की भावना से भरा हुआ यह भगवान है !!

सचमुच, हम भाग्यशाली हैं कि हमारा वैदिक धर्म में जन्म हुआ है, हम और भी महा भाग्यशाली हैं कि भारतीय संस्कृति का जो स्तम्भ है ऐसा वेद और गीता का ज्ञान सुनने और सुनानेवाले माहौल में हम पैदा हुए हैं। आप 'दासोऽहम्-दासोऽहम्' करके सिकुड़-सिकुड़ के दीन-हीन होकर अपनी शक्तियों को कुंठित मत करिये। आप तो संकल्प कीजिये : 'मैं भगवान का हूँ, भगवान मेरे हैं। भगवान विकारों के बीच भी निर्विकार हैं तो मैं भी विकारों के बीच निर्विकार रहूँगा। भगवान सुख में आसक्त नहीं होते और दुःख में दुःखी नहीं होते, दुःख का भी सदुपयोग करते हैं तो मैं भी ऐसा करूँगा।'

जब जाने का समय हुआ तो एक शिकारी के द्वारा संसार से विदाई ले रहे हैं। शिकारी ने देखा कि यह कोई मृग है, कसा निशाना और तीर श्रीकृष्ण के पैर के तलवे में लगा। शिकारी शिकार समझ के दौड़ता हुआ आया, देखा तो घबराया। श्रीकृष्ण बोले : ''कोई बात नहीं। मैं जानता हूँ ऐसी होनी थी तू जा, निश्चिंत हो जा।''

आखिरी श्वास लेने की वेला है और जिसने तीर मारा है उसको देखकर भी नाराजगी नहीं होती। क्या बात है ! कैसा है तुम्हारा भगवान !! 'हाय रे, ए तू चला जाऽऽ... अब मैं प्राण-त्याग करता हूँ... आह...! आह...!!' ऐसा करके नहीं गये। अंतिम यात्रा कैसे करनी चाहिए यह भी कृष्ण बताते हैं।

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥

'हे अर्जुन ! जो योगी अपनी भाँति सम्पूर्ण भूतों में सम देखता है और सुख अथवा दुःख को भी सबमें सम देखता है, वह योगी परम श्रेष्ठ माना गया है।'

(गीता : ६.३२)

सुखद अवस्था आये तो भी, दुःखद अवस्था आये तो भी आप अपने परम ज्ञान में रहिये, परम चेतना में रहिये, परम आनंद में रहिये और परमपुरुष गुरु के तत्त्व में रहिये, उलझिये मत।

कंस को तो हृदयाघात करके भेज सकते थे अथवा तो और कोई दुश्मन देकर पहुँचा सकते थे परंतु **भगवान का भगवद्पना यह है कि एक उद्देश्य के पीछे कई कल्याणकारी उद्देश्यों को लेकर वह अव्यक्त सत्ता व्यक्त हो जाती है, निराकार साकार हो जाता है, अजन्मा सजन्मा हो जाता है, सबसे असंग रहनेवाला सबका संगी बन जाता है।** ❑

''संसार दुःखालय है, इसमें जो सुखी रहने की कोशिश करता है वह महामूर्ख है। इसमें तो निष्काम भाव से सेवा करो और सुख अंतरात्मा का लो। एकाग्रता और अनासक्ति- ये दो सूत्र जिसने समझ लिये, उसके लिए शाश्वत सुख सहज हो जाता है। वह बाजी मार लेता है।''

- पूज्य बापूजी

मनुष्य की विलक्षणता

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

एक होती है कामना, जो जीवमात्र में होती है - खाने की, पीने की, भोगने की, रखने की। कुत्ते का भी पेट जब भर जाता है तब उसे कोई बढ़िया चीज मिलती है तो वह उसे उठाकर ले जाता है और गड्ढा खोदकर गाड़ देता है कि 'कल खायेंगे', यह कामना है। 'पैसे अभी हैं पर थोड़े बैंक में पड़े रहें, फिर काम आयेंगे' - यह कामना है। पेड़-पौधों को भी कामना होती है परंतु उनकी कामना और होती है, मनुष्य की कामना और होती है, कुत्ते की कामना और होती है पर कामना सभी जीवों में होती है। मनुष्य में दो चीजें ऐसी होती हैं जो और जीवों में नहीं होतीं। पेड़-पौधों में कामना होती है खाद-पानी की, कीट-पतंग में कामना होती है अपने आहार की, अपने बच्चों को सुरक्षित रखने की लेकिन मनुष्य में कामना के साथ लालसा भी होती है और जिज्ञासा भी होती है। यह बहुत ऊँची चीज है। इस ऊँची चीज को महत्त्व दे और कामना को प्रारब्ध के, भगवान के हवाले छोड़ दे तो देखते-देखते मनुष्य महान आत्मा बन जायेगा, दिव्यात्मा बन जायेगा। इसीलिए कहते हैं कि मनुष्य-जीवन देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। देवताओं में भी लालसा और जिज्ञासा तो होती है परंतु देवताओं के यहाँ इतनी सुविधा, इतना सुख-वैभव है कि कामना-कामना में वे इतने मशगूल हो जाते हैं कि इन दो चीजों का फायदा उठाने से रह जाते हैं। जब पुण्य नष्ट होते हैं तो फिर मनुष्य-शरीर में आते हैं परंतु मनुष्य-जन्म में ये चीजें ज्यों-की-त्यों बरकरार रहती हैं - लालसा और जिज्ञासा।

लालसा होती है भगवान का रसपान करने की, भगवान का माधुर्य पाने की। कितना भी धन हो जाय फिर भी अंदर से धनी भी भगवान की तरफ जाते हैं, किसी-न-किसीको मानते हैं। लगभग सभी लोग भगवान को मानते हैं, कोई-कोई नहीं मानता होगा। जो नहीं मानते, समझो उनकी मनुष्यता ही खो गयी।

मनुष्य में यह लालसा रहती है कि भगवत्सुख मिले, भगवत्प्रीति मिले, भगवद्रस मिले, भगवद्धाम मिले। हम लोग स्वर्ग बोलते हैं, कोई बिहिश्त बोलता है, कोई पैराडाइज बोलता है, कोई कुछ बोलता है किंतु यह लालसा मनुष्य में रहती है।

जिज्ञासा होती है 'हम वास्तव में कौन हैं ?' इसे जानने की। शरीर मर जाता है फिर भी हम तो रहते हैं। अगर हम नहीं रहते तो स्वर्ग में कौन जाता है, नरक में कौन जाता है ? मरने के बाद भी हम तो हैं न ! तो हम कौन हैं और भगवान क्या हैं ? हमारे और भगवान के बीच क्या संबंध है, क्या दूरी है और वह कैसे मिटे, कैसे जानें ? यह जो जानने की भावना होती है वह जिज्ञासा है। भगवद्रस पाने का जो लालच होता है उसे लालसा बोलते हैं और संसारी चीजों को पाने की इच्छा को वासना बोलते हैं।

तो मनुष्य में तीनों होती हैं - वासना, लालसा और जिज्ञासा। अगर वासना-ही-वासना है तो मनुष्य और कुत्ते में कोई ज्यादा फर्क नहीं है। दुःख आया तो मनुष्य दुःखी हो गया, घबड़ा गया... कुत्ता भी दुःख में घबड़ाता है, पूँछ दबा देता है और सुख आया तो पूँछ हिलाता है, खुशी दिखाता है, मनुष्य

भी दिखाता है लेकिन कुत्ते से मनुष्य बहुत ऊँचा है। बैल, घोड़े, गधे - सभी प्राणियों से मनुष्य ऊँचा है क्योंकि दो रत्न और भी हैं - लालसा और जिज्ञासा। मनुष्य उन रत्नों को महत्त्व दे दे तो वह देवताओं से भी आगे निकल जायेगा। देवता भगवान के बाप नहीं बने हैं परंतु मनुष्य भगवान के बाप भी बने हैं। देवता भगवान के गुरु नहीं बने हैं पर मनुष्य भगवान के गुरु भी बने हैं।

मनुष्यैः क्रियते यत्तु तन्न शक्यं सुरासुरैः ।

'जो ऊँचाई मनुष्य पा सकता है, वह सुर और असुर भी नहीं पा सकते।'

(ब्रह्म पुराण : २७.७०)

मनुष्य अपनी जिज्ञासा और लालसा को महत्त्व देकर इतना ऊँचा उठ सकता है, इतना ऊँचा उठ सकता है कि जहाँ ऊँचाई की हद हो जाय ! **यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ।** जहाँ जाने के बाद पतन ही नहीं होता । **न तद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः ।** वहाँ सूर्य का प्रकाश, चन्द्रमा का प्रकाश या अग्नि का प्रकाश नहीं । अग्नि, चंदा और सूर्य को भी जो प्रकाशित करता है उस प्रकाशमय सत्त्व को, तत्त्व को, आत्मा को जानकर मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है । बाहर से इतनी गरीबी है कि शरीर पर केवल लँगोटी है, तीन थिगली (पैवंद) लगी हैं, सब्जी में नमक डालने के पैसे नहीं हैं किंतु जिज्ञासा और लालसा बढ़ गयी तो ऐसे पद को पाता है कि इन्द्र भी उसके आगे बबलू हो जाता है।

जिज्ञासा से ब्रह्मज्ञान हो जाता है, लालसा से ब्रह्म-परमात्मा का रस पैदा होता है। मैं तो आपको सलाह देता हूँ कि आपके अंदर ये दो दिव्य शक्तियाँ हैं, उनको सहयोग करो । लालसा और जिज्ञासा को बढ़ाओ । कामना में समय बर्बाद मत करो । कामनाएँ क्षीण होती जायें तथा जिज्ञासा और लालसा सफल होती जायें, यह सच्ची सफलता है।

कामनावाले से तो वृक्ष भी डरते हैं। आप बस-स्टैंड पर खड़े हैं और कोई भिखमंगा कामना करके आता है तो आपको अच्छा नहीं लगता है । जान छुड़ाने के लिए कुछ पैसे डाल देते हो। और जिनको कामना नहीं है ऐसे संत को हाथ जोड़कर, माथा टेककर भी पीछे-पीछे घूमते हो कि ''बाबाजी ! जरा यह फल-फूल ले लो ।'' बाबाजी बोलते हैं : ''नहीं चाहिए बेटे !'' आप फिर से 'बाबा ! बाबा !!' करते हैं, मानो उन्होंने लिया तो हम पर मेहरबानी कर दी। कामनारहित पुरुष को कुछ देते हैं तो वह महापुण्य बन जाता है और कामनावाले को देते हो तो जान छुड़ाने के लिए। आप भगवान से, समाज से या प्रकृति से भिखमंगे होकर कामनापूर्ति के गुलाम मत बनो तो प्रकृति आपके पीछे-पीछे घूमेगी। मैंने अपने आश्रमों में बोर्ड लगा रखे हैं कि 'चीज-वस्तु, रुपये-पैसे की कोई जरूरत नहीं है। आश्रम के नाम पर कोई रुपया-पैसा माँगता है तो मुख्यालय को खबर करो।' आज तक मैंने कोई आश्रम बनाने के लिए चंदा नहीं किया, फिर भी आपको पता है कि कितने सारे आश्रम चल रहे हैं। कितनी गौशालाएँ चल रही हैं, कितने औषधालय चल रहे हैं और गरीबों को रोजी-रोटी नहीं मिलती, काम-धंधा नहीं मिलता तो आश्रमों में, समितियों में 'भजन करो, भोजन करो, दक्षिणा पाओ' केन्द्र चल रहे हैं। मैंने कामना नहीं की कि आप मुझे यह चीज दो, रुपया दो । अरे, जो प्रारब्ध में होगा, आयेगा। बच्चा माँ के गर्भ से जन्म लेता है तो क्या कामना करता है कि मेरे लिए दूध बन जाय, दूध बन जाय ? प्रकृति और परमात्मा की व्यवस्था है, अपने-आप दूध बन गया न ! तो प्रारब्ध-वेग से सब मिलता रहता है। क्या आप कामना करते हो कि श्वास मिल जाय, मिल जाय ? अरे, आपकी आवश्यकता है तो श्वास मिलता रहता है । इसलिए कामना करके अपनी इज्जत मत बिगाड़ो, लालसा और जिज्ञासा करके, उनको बढ़ाकर अपना खजाना पा लो बस ! ❑

सफलता का रहस्य

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

विषय का दुःख और चिंताओं का विचार करके, कें-कें करके क्यों सिकुड़ता है भैया ! जो कुछ होगा, आपके कल्याण के लिए होगा क्योंकि भगवान का विधान मंगलमय ही है। सिवाय आपके मंगल के और कभी कुछ नहीं होगा । लेकिन खबरदार ! सब भगवान समझकर अपनी दुर्बलताओं को, विकारों को पोसना नहीं अपितु त्याग, धर्म, प्रेम और परमात्म-भाव को प्रकट करना है । अरे यार ! मनुष्य-जन्म पाकर भी शोक, चिंता, भय और भावी के लिए सशंकित रहे तो बड़े शर्म की बात है। दुःख वे करें जिनके माँ-बाप, नाते-रिश्तेदार, कुटुम्ब-परिवार सब मर गये हों। आपके सच्चे माँ-बाप, सच्चे नाते-रिश्तेदार अंतर्यामी आत्मा-परमात्मा हैं। खुश रहो, मौज में रहो । कई वर्ष बीत गये, ऐसे यह वर्ष भी बीत जायेगा यह बात पक्की रखो, दिल में जमा लो। ईश्वर के नाते कार्य करो । अपने स्वार्थ और व्यक्तित्व के संबंध में कतई सोचना छोड़ दो । इससे बढ़िया ऊँची अवस्था और कोई नहीं है । आपके लिए मानव तो क्या, यक्ष, किन्नर, गंधर्व और देवता भी लोहे के चने चबाने के लिए तत्पर रहेंगे। आजमाकर देखो इस नुस्खे को। संदेह को गोली मारो। पवित्र ॐकार का मधुर गुंजन करो। आत्मस्थ होओ। लड़खड़ाते हुए, चिंतित होकर, बोझिल मन बनाकर संसार के कार्य मत करो। कुलीन राजकुमार की तरह खेल समझकर संसार के व्यवहार को तत्परता से, सूझबूझ से, अनासक्त बन के करो। लेकिन याद रखो : कर्तापन को बार-बार झाड़ दिया करना। फिर आपका जीवन हजारों के लिए अनुकरणीय हो जायेगा।

वास्तव में जैसा आपका चित्त होता है, वैसे चित्त और स्वभाववाले लोग आपके पास आकर्षित हो जाते हैं । औरों की अवस्था पर भला-बुरा चिंतन करते रहने से कभी झगड़ा निपटता नहीं। दूसरे लोगों को क्या पकड़ना ! सोचो और अनुभव करो कि 'सब मनों का मन मैं हूँ, सब चित्तों का चित्त मैं हूँ।' अंदर से ऐसी एकता है तो अपने को शुद्ध करते ही सब शुद्ध-ही-शुद्ध पाओगे।

अपने में दोष होता है तभी किसीके दोष का चिंतन होता है। सबका मूल अपना आत्मकेन्द्र है। अपने को ठीक कर दिया तो सारा विश्व ठीक मिलेगा। अपने को ठीक कोई पद-प्रतिष्ठा से, कायदे-कानून से, रुपये-पैसे से या चीज-वस्तुओं से थोड़े ही किया जाता है। कुविचारों से अपने को खराब कर दिया, अब सुविचारों से और सत्कृत्यों से अपने को ठीक कर दो। विचार जहाँ से उठते हैं उसमें ठहर गये तो परम ठीक हो गये।

जो लाभ हो गया सो हो गया, जो घाटा हो गया सो हो गया, जो बन गया सो बन गया, बिगड़ गया सो बिगड़ गया। संसार एक खिलवाड़ है । उसमें क्या आस्था करना ! अपनी आत्ममस्ती को नश्वर परिस्थितियों के लिए क्या त्यागना ! आप तो भगवान शंकर की तरह बजाओ शंख और 'शिवोऽहं' के गीत गाओ।

अपने-आपको ब्रह्ममय करते नहीं और दूसरों को सुधारने में लग जाते हैं। ब्रह्मदृष्टि करने के सिवा अपने वास्तविक कल्याण का और कोई चारा नहीं है। वैरी, विरोधी, शत्रुओं के दोषों को क्षमा करते इतनी देर भी न लगायें जितनी देर श्रीगंगाजी तिनका बहाने में लगाती हैं। जब तक

पदार्थों में समदृष्टि नहीं होती तब तक समाधि कैसी ! 'समाधि' माने सम+धी अर्थात् समान बुद्धि, समान दृष्टि ।

सत्संग में रुचि नहीं होती तो सत्य में प्रतिष्ठा कैसी ! विषयात्मक दृष्टिवाले को योग-समाधि और ध्यान तो कहाँ, धारणा भी होनी असम्भव है। समदृष्टि तब होगी जब लोगों के विषय में भलाई-बुराई की भावना उठ जाय। भलाई-बुराई की भावना दूर कैसे हो ? लोगों को ब्रह्म से भिन्न मानकर अच्छे-बुरे की जो कल्पना कर रखी है, वह कल्पना न करें। जैसे समुद्र में तरंगें होती हैं, कोई छोटी कोई बड़ी, कोई ऊँची कोई नीची, कोई तिरछी कोई सीधी, उन सब तरंगों की सत्ता समुद्र से अलग नहीं मानी जाती। उनका जीवन सागर के जीवन से भिन्न नहीं जाना जाता। इसी प्रकार भले-बुरे आदमी, अमीर-गरीब लोग भी उसी ब्रह्म-समुद्र की तरंगें हैं। सबमें एक ही ब्रह्म-समुद्र हिलोरें ले रहा है।

जैसे छोटी-बड़ी तरंगें, फेन, बुदबुदे सब समुद्र से अभिन्न हैं, ऐसे ही अच्छे-बुरे, छोटे-बड़े, अपने-पराये सब जीव आत्म-समुद्र की तरंगें हैं। ऐसी दृष्टि करने से सारे दुःख, शोक, चिंताएँ, खिंचाव, तनाव शांत हो जाते हैं। राग-द्वेष की अग्नि बुझ जाती है, चित्त में परमात्म-शांति, परमात्म-शीतलता आ जाती है। रोम-रोम में आह्लाद आ जाता है। निगाहों में नूरानी नूर चमकने लगता है। आत्मविचार मात्र से तत्काल कल्याण हो जाता है। सारे दुःख, सारी चिंताएँ, सारे शोक, पाप, ताप, संताप उसी समय पलायन हो जाते हैं। सूर्योदय होता है तब अंधकार पूछने को थोड़े ही बैठता है कि मैं जाऊँ या न जाऊँ। दिया जला तो अंधकार छू... सूर्योदय हुआ तो रात्रि छू... ऐसे ही आत्मज्ञान का प्रकाश होते ही अज्ञान और अज्ञानजनित सारे दुःख, शोक, चिंता, भय, संघर्ष आदि दोष पलायन हो जाते हैं। व्यापक ब्रह्म को जो अपना आत्मा समझते हैं, उनके लिए देवता लोग भी भेंट समर्पण करते हैं : **सर्वेऽस्मै देवा बलिमावहन्ति। (तैत्तिरीय उपनिषद् : १.५.३)** यक्ष, किन्नर, गंधर्व उनकी चाकरी में लग जाते हैं। चीज-वस्तुएँ उनकी सेवा में लगने के लिए एक-दूसरे से स्पर्धा करती हैं। ऐसे होते हैं ब्रह्मवेत्ता ! जो तरंग सागर से ऊँची उठ गयी है वह अवश्य वापस गिरेगी ही। इसी प्रकार जिस पुरुष में खोटापन घुस गया है, उसे अवश्य दुःख पाना है। तरंगों के ऊँच और नीच भाव को प्राप्त होने पर भी समुद्र की सपाटी को क्षितिज धरातल ही माना जाता है। इसी तरह लोगों के बीजरूप कर्म और कर्मफल को प्राप्त होते रहने पर भी ब्रह्मरूपी समुद्र की समता में कोई फर्क नहीं पड़ता।

लहरों का तमाशा देखना भी सुखदायी और आनंदमय होता है। जो पुरुष इन लहरों से भीग जाय या इनमें डूबने लगे तो उसके लिए लहरें उपद्रवरूप हैं। ऐसे ही कर्ता-भोक्तापन से भीग गये तो तकलीफ उठानी पड़ेगी। निर्लेप, साक्षी रहे तो आनंद-ही-आनंद है।

उपासना का प्राण समर्पण और आत्मदान है। इसके बिना उपासना निष्फल है, प्राणरहित है। भैया ! जब तक आप अपनी खुदी और अहंकार परमेश्वर के हवाले न करोगे, तब तक परमेश्वर-स्वभाव में स्थिति कैसे होगी ! वे आपसे दूर-ही-दूर रहेंगे, जैसे भगवान श्रीकृष्ण कालयवन से दूर रहते थे।

कोई सोचे कि 'चलो, भजन-उपासना करके देखें, फल मिलता है या नहीं' तो यह परीक्षा का भजन असंगत और असम्भव है। यह भजन ही नहीं है। निष्कपट भजन तो वह है जिसमें भक्त अग्नि में आहुति की तरह फल और फल की इच्छावाले अपने-आपको परमेश्वर के हवाले कर देता है, पूर्ण समर्पित हो जाता है।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से क्रमशः) ❐

संदेह और स्वीकार

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

एक बात आप समझ लेना कि संसार को जानना हो तो आपको संशय करना पड़ेगा - यह कैसे हुआ, वह कैसे हुआ ? और सत्य को जानना है तो आपको सद्गुरुओं के वचन स्वीकार करने पड़ेंगे। संसार को जानना है तो संदेह चाहिए और सत्य को जानना है तो स्वीकार चाहिए।

अब तुम गये मंदिर में। भगवान बुद्ध की मूर्ति है तो भगवान समझकर तुमने प्रणाम किये। विष्णु की मूर्ति है तो...

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

ऐसी प्रार्थना की। ऐसा नहीं सोचोगे कि 'ये तो कुछ बोलते नहीं, ये माता-पिता कैसे हो सकते हैं ? ये तो जयपुर से साढ़े आठ हजार रुपये के आये हुए हैं।' ऐसा नहीं, वहाँ तुम्हें संदेह नहीं करना होगा। 'ये भगवान हैं क्योंकि प्राण-प्रतिष्ठा की हुई है। ये भगवान हैं, इनसे मेरा मंगल होगा, इनसे मेरा कल्याण होगा।' - यह आपको मानना पड़ेगा। गये अम्बाजी। 'अम्बे मात की जय। लाखों आये, लाखों गये मेरी माँ, तेरे द्वारे ! तू दया करना। मेरे छोकरों को राजी रखना। मेरे छोकरे नहायें, धोयें, खायें, अभी तो बीमार पड़े हैं...' अब वहाँ संदेह नहीं करेगा कि माताजी को पुजारी नहलाता है। वहाँ मान लेना है कि माताजी की कृपा से छोकरे नहाते-धोते हो जायेंगे, छोकरे ऐसे हो जायेंगे। तो धर्म में तुम्हें संदेह नहीं बल्कि स्वीकार करना पड़ता है। स्वीकार करते-करते तुम एक ऐसी जगह पर आते हो कि तुम्हारी अपनी पकड़-जकड़ नहीं रहती और तुम स्वीकृति दे देते हो। जब स्वीकृति दे देते हो तो ऐसी तुम्हारे में जो समझ है वह श्रद्धा का रूप ले लेती है। श्रद्धा लेकर तुम जब सद्गुरु के पास पहुँचते हो तो फिर श्रद्धा के बल से तुम ऊँची तात्त्विक बातें भी मानने लग जाते हो। तुम जो आज तक देह को मैं मान रहे थे, यह भी तो पुतला है, इस देह को मैं मान बैठे थे, मन में जो आता था वह मेरा मान बैठते थे। आँखों से दिखता था तो तुम बोलते थे, 'मैं देखता हूँ', कानों से सुनाई पड़ता था तो तुम बोलते थे, 'मैं सुनता हूँ', नाक से सूँघते थे तो तुम बोलते थे, 'मैं सूँघता हूँ'... वह जो तुम्हारा 'मैं' और 'मेरा'- मेरी नाक और मैं सूँघनेवाला, मेरी आँख और मैं देखनेवाला, मेरा कान और मैं सुननेवाला, मेरा पेट और मैं खानेवाला- यह जो तुम्हारी सदियों की मान्यता है, भ्रम है उसे सद्गुरु हटा देंगे। अब श्रद्धा के बल से स्वीकार के रास्ते तुम चले हो तो गुरु समझायेंगे कि 'यह तुम नहीं करते हो, तुम्हारे शरीर में आँखें और मन का मेल होकर दिखता है। कान और मन का मेल होकर सुनाई पड़ता है। इन सबको जो देखता है... जो मन को देखता है, जो बुद्धि के निर्णय को देखता है वह आत्मा तू है - **'तत्त्वमसि'**, यह मान ले।'

जब तुम ये ऊँची बातें मानने लग जाते हो तो ऊँचे तत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है, यह हुआ ज्ञानसहित विज्ञान।

मैं आत्मा हूँ। कैसे आत्मा हूँ ? ऐसा प्रश्न पूछ सकते हो पर तुम्हारे हृदय में यदि श्रद्धा है और स्वीकार करने की क्षमता है तो इस प्रश्न का

उत्तर मिलेगा तो तुम्हारे हृदय में बैठेगा । नहीं तो प्रश्नों के उत्तर कितने भी मिलें, ऐसा कोई शब्द नहीं जिसका प्रत्यवाय (काट) न हो । ऐसा कोई प्रश्न का उत्तर नहीं है जिसका तर्क करके खंडन न हो । तो सत्य तर्क से सिद्ध नहीं होता; सारे तर्क जिससे सिद्ध होते हैं अथवा सारे तर्क पैदा होकर जिसमें लीन हो जाते हैं वह सत्यस्वरूप परमात्मा तर्कों का विषय नहीं और मान लेने का विषय नहीं अपितु सब विषय उसीसे उत्पन्न होते हैं, उसीमें लीन हो जाते हैं । इसमें जब श्रद्धा होती है, इसे स्वीकार करने की क्षमता होती है, ईश्वर में प्रीति होती है तो ईश्वर के समग्र स्वरूप को जान लेता है आदमी । नहीं तो क्या कि ईश्वर के एक-एक खंड को आदमी पकड़ लेता है। मेरा तो भगवान है- झुलेलाल । झुलेलाल ही भगवान है । तो 'झुलेलाल-झुलेलाल' करेंगे तो आनंद आयेगा और दूसरे किसी भगवान की जय कर दी तो मेरा आनंद गायब हो जायेगा। अथवा तो मेरा तो इष्ट है रामजी; अब रामजी की जय हुई तो ठीक और श्रीकृष्ण की जय हुई तो आनंद गायब ! जब राम-तत्त्व को जाना, झुलेलाल-तत्त्व को जाना, कृष्ण-तत्त्व को जाना तो पता चलेगा कि सत्ता एक है, आकृतियाँ अनेक हैं । सत्ता एक है, रूप अनेक हैं । जैसे - तुम्हारे अंदर सत्ता एक है परंतु आँख देखती है उसके रूप अनेक हैं। अंदर सत्ता एक है किंतु कान सुनते हैं उनके शब्द अनेक हैं । गंध अनेक हैं पर सूँघने की सत्ता एक है। जैसे तुम्हारे शरीर में सत्ता एक है ऐसे सबके शरीरों में सत्ता एक है। मनुष्यों के शरीर में तो सत्ता एक हुई लेकिन उसी सत्ता से गाय की आँखें देखती हैं जिस सत्ता से तुम देखते हो, उस सत्ता से ही भैंस देखती है जिस सत्ता से तुम देखते हो । हाँ, भैंस की बुद्धि में और तुम्हारी बुद्धि में, गाय की बुद्धि में और भैंस की बुद्धि में फेर हो सकता है परंतु सत्ता में फेर नहीं होता। तो इस सत्ता का स्वरूप समझ में आ जाय...

इस प्रकार विशेष ज्ञान में विचित्रता होती है, सामान्य ज्ञान में विचित्रता नहीं होती है । सामान्य ज्ञान सर्वत्र सम है, एक-जैसा है और वह सदा एकरस है। उस एकरस को जानकर साधक निर्द्वंद्व हो जाता है, निःशंक हो जाता है । ❒

(पृष्ठ ११ से 'उसके लिए क्या असम्भव है !' का शेष)

रास्ते में एक नदी पर वे नित्यकर्म कर रहे थे कि इतने में ही तक्षक मनुष्य का वेश बनाकर कुण्डलों को लेकर भागा । उत्तंक ने उसका पीछा किया किंतु वह अपना असली रूप धारण कर पाताल में चला गया । इन्द्र की सहायता से उत्तंक पाताल में गये और वहाँ इन्द्र को अपनी स्तुति से प्रसन्न करके नागों को जीतकर तक्षक से उन कुण्डलों को ले आये । इन्द्र की ही सहायता से वे अपने निश्चित समय से पहले गुरुपत्नी के पास पहुँच गये । गुरुपत्नी उन्हें देखकर बहुत प्रसन्न हुईं और बोलीं : ''मैं तुम्हें आशीर्वाद देती हूँ, तुम्हें सब सिद्धियाँ प्राप्त हों ।''

गुरुपत्नी को कुण्डल देकर उत्तंक गुरु के पास गये । समाचार सुनकर गुरु ने कहा : ''इन्द्र मेरे मित्र हैं । वह गोबर अमृत था, उसीके कारण तुम पाताल में जा सके । मैं तुम्हारे साहस से बहुत प्रसन्न हूँ । अब तुम प्रसन्नता से घर जाओ ।'' इस प्रकार गुरु और गुरुपत्नी का आशीर्वाद पाकर उत्तंक अपने घर गये ।

परमात्मस्वरूप श्री सद्गुरुदेव के श्रीचरणों में जिसकी अनन्य श्रद्धा हो, गुरुवचनों पर पूर्ण विश्वास हो एवं गुरु-आज्ञापालन में दृढ़ता हो उसके लिए जीवन में कौन-सा कार्य असम्भव है ! आगे चलकर उत्तंक बड़े ही तपस्वी, ज्ञानी ऋषि हुए । भगवान श्रीकृष्ण ने महाभारत युद्ध के अनंतर द्वारका लौटते समय इन्हें अपने महिमामय विराट स्वरूप का दर्शन कराया था । ❒

जीवन-संजीवनी

- श्री परमहंस अवतारजी महाराज

✻ सद्गुरु के सेवक को ऐसा आचरण करना चाहिए जो साधारण लोगों के लिए प्रमाण बन जाय और स्वतः उनके मुख से निकले कि धन्य हैं इनके सद्गुरु, जिनसे इन्हें आत्मिक शांति प्राप्त हुई है।

✻ सद्गुरु के सेवक को मन और इन्द्रियों के अधीन नहीं रहना चाहिए। परीक्षा के समय तो और भी अधिक सतर्क रहे। यदि कोई कटु या कर्कश बोलता है तो उसके साथ भी उसको वैसा नहीं बोलना चाहिए, नहीं तो सत्संगी और साधारण मनुष्य में क्या अंतर हुआ !

✻ ऐ गुरुमुख ! तुमसे यदि कोई अनुचित व्यवहार करे तो तुम क्रोधित न होओ। सद्गुरु का ध्यान करो और उनके वचन याद करो।

✻ तुम यद्यपि पूर्ण सद्गुरु के सेवक हो, फिर भी आज्ञा माने बिना कृपा उपलब्ध नहीं होगी और कृपा बिना निस्तार नहीं होगा।

✻ तुम जो कुछ सत्संग में सुनते हो, उसे कार्यान्वित करते हो या नहीं, यह जाँच सदैव किया करो और कदम आगे-ही-आगे क्रमशः बढ़ाते रहो।

✻ यदि तुम गुरुशरण अपनाकर भी मन के अनुसार ही काम करते रहे तो जीवन अकारथ गया।

✻ जो स्वयं ही क्रोधरूपी अग्नि में जलता रहता है, वह दूसरों की तपन कैसे बुझायेगा !

✻ सेवक को सदैव यह देखना चाहिए कि मुझमें भक्ति के गुणों की वृद्धि हो रही है या कमी ? यदि कमी हो रही है तो अपने ऊपर खेद करना चाहिए और गुरु के चरणों में प्रार्थना करनी चाहिए कि मुझे भजनाभ्यास करने की शक्ति दें।

✻ ऐ सेवक ! तुम गुरुआज्ञा पर अमल करो तो सच्चे इन्सान बन जाओगे और अमल के बिना कथनी करनेवाला चाहे कितना भी पढ़ा हुआ क्यों न हो, उसे अनजान ही समझना चाहिए।

✻ गुरु-शब्द सब दुःखों की औषधि है। उसकी कमाई से तुम्हारे जन्म-जन्मों की मैली सुरति (वासना) निर्मल हो जायेगी।

✻ यदि सद्गुरु-शब्द का रस लेना चाहते हो तो विषय-रसों का त्याग करो। एक म्यान में दो तलवारें कैसे समायेंगी !

✻ एकांत से अधिक प्रेम करो और दिल का सारा बोझ गुरुचरणों में समर्पित करके स्वतंत्र होकर रूहानी (आत्मिक) मार्ग की यात्रा करो।

✻ प्रमाद एवं वाद-विवाद को त्याग गुरुसेवा में तत्पर रहो और चुप रहो।

✻ लोगों की बातों से भयभीत होकर या आकृष्ट होकर सत्य से मुख न मोड़ो। तुम्हारी मुक्ति लोगों के हाथ में नहीं है। करोड़ों लोगों को चाहे प्रसन्न कर लो परंतु मालिक (परमात्मा) की दृष्टि से यदि वंचित रह गये तो समझो, असफल होकर जा रहे हो।

✻ कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ेगा। जैसा कर्म होगा वैसा ही परिणाम होगा। इसलिए तुम भाग्यशाली हो जो तुम्हें सद्गुरु की शरण प्राप्त हो गयी है, जिसके फलस्वरूप तुम्हें शुभ कर्म कराने के लिए सहयोगी मिल गये और कुकर्मों से बचाने के लिए रक्षक।

✻ जैसी वस्तु होगी वैसा मूल्य होगा। पाँच सौ या हजार रुपये में कुर्सी, मेज या पलंग आदि मिल जायेंगे। मकान हजारों या लाखों देने से मिलेंगे। यदि सद्गुरु-द्वार से नामरूपी अमूल्य पदार्थ लेना चाहते हो तो तन-मन-धन का मूल्य देने के लिए तत्पर रहो। ❒

विद्यार्थियों की दैनंदिनी

निम्नलिखित ढंग की एक दैनंदिनी रखो। यह प्रतिदिन आपको अपने कर्तव्यों की याद दिलायेगी। यह आपको पथ-प्रदर्शक और शिक्षक का काम देगी।

१. सोकर कब उठे ?

२. कितनी देर तक भगवान की प्रार्थना की ?

३. क्या पाठशाला का कोई काम शेष है ?

४. क्या आज आपने मनमानी करने के लिए अपने माता-पिता और शिक्षक की आज्ञा भंग की ?

५. कितने घंटे गपशप में या कुसंगति में बिताये ?

६. कौन-सी बुरी आदत को हटाने का प्रयास चल रहा है ?

७. कौन-से गुण का विकास कर रहे हो ?

८. कितनी बार क्रोध किया ?

९. क्या आप अपने वर्ग में समयनिष्ठ रहते हैं ?

१०. आज कौन-सी निःस्वार्थ सेवा की ?

११. क्या खेल और शारीरिक व्यायाम में नियमित रहे और कितने मिनट या घण्टे इसमें लगाये ?

१२. किसीको मन, वचन और कर्म से हानि तो नहीं पहुँचायी ?

प्रतिदिन प्रत्येक प्रश्न के सामने अपना उत्तर लिख दो। चार-छः माह के अनंतर आप अपने में महान परिवर्तन पायेंगे। आप पूर्णतः रूपांतरित हो जायेंगे। इस आध्यात्मिक दैनंदिनी के पालन से आपकी आश्चर्यजनक रूप से उन्नति होगी। ❐

गणेश चतुर्थी या कलंकी चौथ

गणेश चतुर्थी को 'कलंकी चौथ' भी कहते हैं। इस चतुर्थी का चाँद देखना वर्जित है।

इस वर्ष गणेश चतुर्थी (११ सितम्बर) के दिन चन्द्रास्त रात्रि ८-४५ बजे है। इस समय तक चन्द्रदर्शन निषिद्ध है।

यदि भूल से भी चौथ का चन्द्रमा दिख जाय तो 'श्रीमद् भागवत' के १०वें स्कंध के ५६-५७वें अध्याय में दी गयी 'स्यमंतक मणि की चोरी' की कथा का आदरपूर्वक श्रवण करना चाहिए। भाद्रपद शुक्ल तृतीया या पंचमी के चन्द्रमा का दर्शन करना चाहिए, इससे चौथ को दर्शन हो गये हों तो उसका ज्यादा खतरा नहीं होगा।

अनिच्छा से चन्द्रदर्शन हो जाय तो...

निम्न मंत्र से पवित्र किया हुआ जल पीना चाहिए। मंत्र का २१, ५४ या १०८ बार जप करें। मंत्र इस प्रकार है :

सिंहः प्रसेनमवधीत् सिंहो जाम्बवता हतः।
सुकुमारक मा रोदीस्तव ह्येष स्यमन्तकः॥

'सुंदर, सलोने कुमार ! इस मणि के लिए सिंह ने प्रसेन को मारा है और जाम्बवान ने उस सिंह का संहार किया है, अतः तुम रोओ मत। अब इस स्यमंतक मणि पर तुम्हारा ही अधिकार है।' **(ब्रह्मवैवर्त पुराण, अध्याय : ७८)**

चौथ के चन्द्रदर्शन से कलंक लगता है। इस मंत्र-प्रयोग अथवा उपर्युक्त पाठ से उसका प्रभाव कम हो जाता है। ❐

* प्रकृति प्रसन्नचित्त एवं उद्योगी कार्यकर्ता को हर प्रकार से सहायता करती है।
* प्रसन्नमुख रहना यह मोतियों का खजाना देने से भी उत्तम है।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन रसायन' से)

विद्यार्थियों की दैनंदिनी

निम्नलिखित ढंग की एक दैनंदिनी रखो। यह प्रतिदिन आपको अपने कर्तव्यों की याद दिलायेगी। यह आपको पथ-प्रदर्शक और शिक्षक का काम देगी।

१. सोकर कब उठे ?

२. कितनी देर तक भगवान की प्रार्थना की ?

३. क्या पाठशाला का कोई काम शेष है ?

४. क्या आज आपने मनमानी करने के लिए अपने माता-पिता और शिक्षक की आज्ञा भंग की ?

५. कितने घंटे गपशप में या कुसंगति में बिताये ?

६. कौन-सी बुरी आदत को हटाने का प्रयास चल रहा है ?

७. कौन-से गुण का विकास कर रहे हो ?

८. कितनी बार क्रोध किया ?

९. क्या आप अपने वर्ग में समयनिष्ठ रहते हैं ?

१०. आज कौन-सी निःस्वार्थ सेवा की ?

११. क्या खेल और शारीरिक व्यायाम में नियमित रहे और कितने मिनट या घण्टे इसमें लगाये ?

१२. किसीको मन, वचन और कर्म से हानि तो नहीं पहुँचायी ?

प्रतिदिन प्रत्येक प्रश्न के सामने अपना उत्तर लिख दो। चार-छः माह के अनंतर आप अपने में महान परिवर्तन पायेंगे। आप पूर्णतः रूपांतरित हो जायेंगे। इस आध्यात्मिक दैनंदिनी के पालन से आपकी आश्चर्यजनक रूप से उन्नति होगी। ❐

गणेश चतुर्थी या कलंकी चौथ

गणेश चतुर्थी को 'कलंकी चौथ' भी कहते हैं। इस चतुर्थी का चाँद देखना वर्जित है।

इस वर्ष गणेश चतुर्थी (११ सितम्बर) के दिन चन्द्रास्त रात्रि ८-४५ बजे है। इस समय तक चन्द्रदर्शन निषिद्ध है।

यदि भूल से भी चौथ का चन्द्रमा दिख जाय तो 'श्रीमद् भागवत' के १०वें स्कंध के ५६-५७वें अध्याय में दी गयी 'स्यमंतक मणि की चोरी' की कथा का आदरपूर्वक श्रवण करना चाहिए। भाद्रपद शुक्ल तृतीया या पंचमी के चन्द्रमा का दर्शन करना चाहिए, इससे चौथ को दर्शन हो गये हों तो उसका ज्यादा खतरा नहीं होगा।

अनिच्छा से चन्द्रदर्शन हो जाय तो...

निम्न मंत्र से पवित्र किया हुआ जल पीना चाहिए। मंत्र का २१, ५४ या १०८ बार जप करें। मंत्र इस प्रकार है :

सिंहः प्रसेनमवधीत् सिंहो जाम्बवता हतः।
सुकुमारक मा रोदीस्तव ह्येष स्यमन्तकः॥

'सुंदर, सलोने कुमार ! इस मणि के लिए सिंह ने प्रसेन को मारा है और जाम्बवान ने उस सिंह का संहार किया है, अतः तुम रोओ मत। अब इस स्यमंतक मणि पर तुम्हारा ही अधिकार है।' **(ब्रह्मवैवर्त पुराण, अध्याय : ७८)**

चौथ के चन्द्रदर्शन से कलंक लगता है। इस मंत्र-प्रयोग अथवा उपर्युक्त पाठ से उसका प्रभाव कम हो जाता है। ❐

* प्रकृति प्रसन्नचित्त एवं उद्योगी कार्यकर्ता को हर प्रकार से सहायता करती है।
* प्रसन्नमुख रहना यह मोतियों का खजाना देने से भी उत्तम है।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन रसायन' से)

हवा और आरोग्य

हवा का प्रभाव उसकी गति व दिशा के अनुसार स्वास्थ्य तथा वातावरण आदि पर पड़ता है । अत्यधिक खुली हवा शरीर में रुक्षता उत्पन्न करती है, वर्ण बिगाड़ती है, अंगों को शिथिल करती है, पित्त मिटाती है, पसीना दूर करती है, मूर्च्छा एवं तृषा का शमन करती है । जहाँ हवा का आवागमन न हो वह स्थान उपरोक्त गुणधर्मों से विपरीत प्रभाव डालता है ।

ग्रीष्म ऋतु में इच्छानुसार खुली हवा का सेवन करें व शरद ऋतु में मध्यम हवा हो ऐसे स्थान पर रहें । आयु और आरोग्य की रक्षा हेतु जहाँ अधिक गति से हवा नहीं बहती हो, ऐसे मध्यम हवायुक्त स्थान पर निवास करें । यह सदैव हितकर है ।

निर्वातमायुषे सेव्यमारोग्याय च सर्वदा ।

(भावप्रकाश)

भिन्न-भिन्न दिशाओं से आनेवाली हवा का स्वास्थ्य पर प्रभाव

✲ **पूर्व दिशा की हवा** : भारी, गर्म, स्निग्ध, दाहकारक, रक्त तथा पित्त को दूषित करनेवाली होती है । परिश्रमी, कफ के रोगों से पीड़ित तथा कृश व दुर्बल लोगों के लिए हितकर है । यह हवा चर्मरोग, बवासीर, कृमिरोग, मधुमेह, आमवात, संधिवात इत्यादि को बढ़ाती है ।

✲ **दक्षिण दिशा की हवा** : खाद्य पदार्थों में मधुरता बढ़ाती है । पित्त व रक्त के विकारों में लाभप्रद है । वीर्यवान, बलप्रद व आँखों के लिए हितकर है ।

✲ **पश्चिम दिशा की हवा** : तीक्ष्ण, शोषक व हलकी होती है । यह कफ, पित्त, चर्बी एवं बल को घटाती है व वायु की वृद्धि करती है ।

✲ **उत्तर दिशा की हवा** : शीत, स्निग्ध, दोषों को अत्यंत कुपित करनेवाली, ग्लानिकारक व शरीर में लचीलापन लानेवाली है । स्वस्थ मनुष्य के लिए बलप्रद व मधुर है ।

✲ अग्नि कोण की हवा दाहकारक एवं रुक्ष है । नैऋत्य कोण की हवा रुक्ष है परंतु जलन पैदा नहीं करती । वायव्य कोण की हवा कटु और ईशान कोण की हवा तिक्त है ।

✲ **ब्राह्ममुहूर्त (सूर्योदय से सवा दो घंटे पूर्व से लेकर सूर्योदय तक का समय) में सभी दिशाओं की हवा सब प्रकार के दोषों से रहित होती है । अतः इस वेला में वायुसेवन बहुत ही हितकर होता है ।** वायु की शुद्धि प्रभातकाल में तथा सूर्य की किरणों, वर्षा, वृक्षों एवं ऋतु-परिवर्तन से होती है ।

✲ पंखे की घूमती हवा तीव्र होती है । ऐसी हवा उदानवायु को विकृत करती है और व्यानवायु की गति को रोक देती है, जिससे चक्कर आने लगते हैं तथा शरीर के जोड़ों को आक्रांत करनेवाले गठिया आदि रोग हो जाते हैं ।

खस, मोर के पंखों तथा बेंत के पंखों की हवा स्निग्ध एवं हृदय को आनंद देनेवाली होती है ।

✲ अशुद्ध स्थान की वायु का सेवन करने से पाचन-दोष, खाँसी, फेफड़ों का प्रदाह तथा दुर्बलता आदि दोष उत्पन्न हो जाते हैं । प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति अपनी नासिका की सिधाई में २१ इंच की दूरी तक की वायु ग्रहण करता है

और फेंकता है । अतः इस बात को सदैव ध्यान में रखकर अशुद्ध स्थान की वायु के सेवन से बचना चाहिए ।

✲ जो लोग अन्य किसी भी प्रकार की कोई कसरत नहीं कर सकते, उनके लिए टहलने की कसरत बहुत जरूरी है । इससे सिर से लेकर पैरों तक की करीब २०० मांसपेशियों की स्वाभाविक ही हलकी-हलकी कसरत हो जाती है । टहलते समय हृदय की धड़कन की गति १ मिनट में ७२ बार से बढ़कर ८२ बार हो जाती है और श्वास भी तेजी से चलने लगता है, जिससे अधिक ऑक्सीजन रक्त में पहुँचकर उसे साफ करता है ।

टहलना कसरत की सर्वोत्तम पद्धति मानी गयी है क्योंकि कसरत की अन्य पद्धतियों की अपेक्षा टहलने से हृदय पर कम जोर पड़ता है तथा शरीर के एक-दो नहीं बल्कि सभी अंग अत्यंत सरल और स्वाभाविक तरीके से सशक्त हो जाते हैं।

चतुर्मास में स्वास्थ्य-रक्षा

चतुर्मास में आकाश बादलों से ढका रहता है, जिससे उचित मात्रा में जीवनशक्ति नहीं मिल पाती तथा हानिकारक जंतुओं का नाश नहीं होता । अतः चतुर्मास रोग फैलानेवाला काल माना जाता है । इसमें फैले रोगों का विस्फोट शरद ऋतु में होता है ।

जीवनशक्ति बढ़ाने के उपाय

(१) साधारणतया चतुर्मास में पाचनशक्ति मंद रहती है । अतः आहार कम करना चाहिए । पन्द्रह दिन में एक दिन उपवास रखना न भूलें ।

(२) चतुर्मास में जामुन, कश्मीरी सेब आदि फल होते हैं । उनका यथोचित सेवन करें ।

(३) हरी घास पर खूब चलें । इससे घास और पैरों की नसों के बीच विशेष प्रकार का आदान-प्रदान होता है, जिससे स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है ।

(४) गर्मियों में शरीर के सभी अवयव शरीर-शुद्धि का कार्य करते हैं, मगर चतुर्मास में शुद्धि का कार्य केवल आँतों, गुर्दों एवं फेफड़ों को ही करना होता है । इसलिए सुबह उठने पर, घूमते समय और सुबह-शाम नहाते समय गहरे श्वास लेने चाहिए । चतुर्मास में दो बार स्नान करना बहुत ही हितकर है । इस ऋतु में रात्रि में जल्दी सोना और सुबह जल्दी उठना बहुत आवश्यक है ।

अपान मुद्रा

जो बढ़ाये पवित्रता, सात्त्विकता

लाभ : इस मुद्रा के अभ्यास से शरीर की अंदरूनी सफाई में मदद मिलती है । आँतों में फँसे मल और विषैले पदार्थों को आसानी से बाहर निकालने में यह मुद्रा काफी असरदार है। इसके फलस्वरूप शारीरिक व मानसिक पवित्रता में वृद्धि होती है और अभ्यासकर्ता में सात्त्विक गुणों का समावेश होने लगता है । मूत्र-उत्सर्जन में कठिनाई, वायुदोष, अम्लदोष (पित्तदोष), पेटदर्द, कब्जियत और मधुमेह जैसी बीमारियों में भी यह मुद्रा काफी लाभदायक सिद्ध हुई है । जिन्हें पसीना न आने के कारण परेशानी होती हो, वे इस मुद्रा के अभ्यास से जल्द ही उससे छुटकारा पा सकते हैं । यदि छाती और गले में कफ जम गया हो तो इस मुद्रा के अभ्यास से ऐसे उपद्रवी कफ को भी सहज ही शरीर से बाहर किया जा सकता है।

इसका नियमित अभ्यास कैंसर जैसी भयानक बीमारी की भी रोकथाम करने में सहायक है।

विधि : अँगूठे के अग्रभाग से मध्यमा और अनामिका (छोटी उँगली के पासवाली उँगली) के अग्रभागों को स्पर्श करें । बाकी की दो उँगलियाँ सहजावस्था में सीधी रखें ।

अवधि : इस मुद्रा का अभ्यास किसी भी समय, कितनी भी अवधि के लिए कर सकते हैं परंतु प्रतिदिन नियमित रूप से करें ।

पुनर्नवा

शरीरं पुनर्नवं करोति इति पुनर्नवा ।

जो अपने रक्तवर्धक एवं रसायन गुणों द्वारा सम्पूर्ण शरीर को नवीन स्वरूप प्रदान करे, वह है 'पुनर्नवा' । यह हिन्दी में साटी, साँठ, गदहपुरना, विषखपरा, गुजराती में साटोड़ी, मराठी में घेटुली तथा अंग्रेजी में हॉगवीड नाम से जानी जाती है ।

रसायन-प्रयोग : हमेशा उत्तम स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए रोज सुबह पुनर्नवा के मूल या पत्तों का २ चम्मच (१० मि.ली.) रस पीयें अथवा पुनर्नवा के मूल का चूर्ण २ से ४ ग्राम की मात्रा में दूध या पानी से लें या सप्ताह में १ दिन पुनर्नवा की सब्जी बना के खायें । इन दिनों में यह बहुत सरलता से उपलब्ध हो जाती है । ❐

जैसी करनी, वैसी भरनी...

ठग सुक्खा की जमानत नामंजूर

उदयपुर (राज.) के अतिरिक्त जिला कलेक्टर श्री मांगीलाल चौहान से डेढ़ लाख रुपये की ठगी करने के मामले में सुक्खा द्वारा दर्ज जमानत याचिका राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर ने भी २५ जून को खारिज कर दी । गौरतलब है कि ठगी एवं धोखाधड़ी के अनेकानेक मामलों में लिप्त ठग सुक्खा उर्फ औघड़ सुखाराम उर्फ सुखविंदर सिंह उर्फ हरविंदर सिंह को २७ अप्रैल को राजस्थान पुलिस ने गिरफ्तार किया और ३ दिन की रिमांड भी ली थी । १ मई को जिला एवं सत्र न्यायालय, उदयपुर में सुक्खा को पेश किया गया । न्यायाधीश ने ५ मई को इसकी जमानत खारिज कर इसे जेल भेज दिया था ।

कुख्यात ठग सुखाराम आपराधिक धारा ४२० व ४०६ के अंतर्गत जयपुर जेल में सलाखों के पीछे कैद है और अपने कुकर्मों की सजा भुगत रहा है । इस धूर्त ने पवित्र, निर्दोष संत परम पूज्य बापूजी पर झूठे आरोप लगाकर उन्हें बदनाम करने की नाकाम कोशिश की थी, जिसका दंड प्रकृति उसे दे रही है । न देर है, न अँधेर है... ❐

एक प्रसाद से कई प्रसाद

आज मेरी जिंदगी में जो भी खुशी है, सब पूज्य बापूजी की कृपा से मिली है । मेरे पिछले किसी जन्म के पुण्यकर्मों का फल है जो बापूजी की पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' मुझे मिली । इसे पढ़कर मेरे जीवन में आनंद और प्रसन्नता की बहार आ गयी । मेरी शादी को लगभग आठ साल होने को थे पर मैं संतान-सुख से वंचित थी । एक दिन मेरे पड़ोसी ने मुझे 'ऋषि प्रसाद' दी और तब इसे पहली बार पढ़ने का सौभाग्य मिला । उसमें एक भक्त का अनुभव छपा था- 'गुरुकृपा से तीन संतान' । अनुभव को पढ़कर मेरे मन में विचार आया कि जब पूज्य बापूजी ने इसकी गोद भर दी तो मुझ पर भी उनकी कृपा अवश्य बरसेगी । मैंने श्रद्धापूर्वक, सच्चे मन से, पूरे विश्वास के साथ 'श्री आसारामायण' के १०८ पाठ किये और मेरे विश्वास की जीत हुई । मुझे कन्यारूप में साक्षात् लक्ष्मी मिली तथा दो वर्ष बाद एक बेटा हुआ । बेटा २ महीने का हुआ था कि मेरी ६ वर्ष से रुकी हुई नौकरी भी मुझे मिल गयी । मेरी वीरान जिंदगी अचानक यूँ खुशियों से भर गयी ! यह सब मेरे पूज्य बापूजी की कृपा से ही सम्भव हुआ है । - अर्चना भराड़िया, गाँव इच्छी, जि. काँगड़ा (हि.प्र.).

जो यहाँ मिला वह कहीं नहीं

मेरा नाम जेम्स हिगिन्स है । मैं नॉटिंघम (इंग्लैंड) का रहनेवाला हूँ । फरवरी २००७ को प्रयागराज के अर्धकुंभ के अवसर पर मैं भारत आया था । मेरा परम सौभाग्य था कि मेले में घूमते-घामते मैं संत श्री आसारामजी बापू के पावन सान्निध्य में जा पहुँचा । बापूजी के सत्संग में जाने का मेरा यह पहला अवसर था ।

सत्संग-मंडप में अपार भीड़ थी इसलिए मुझे पीछे ही बैठने की जगह मिली । कौन बोल रहे हैं, यह मैं नहीं देख पा रहा था । मुझे सत्संग जरा भी समझ में नहीं आ रहा था क्योंकि मुझे हिन्दी बिल्कुल नहीं आती थी, पर मेरे मन में उठकर चले जाने का विचार नहीं आया क्योंकि बड़ा आनंद और शांति का अनुभव हो रहा था ।

दूसरे दिन पुनः मैं सत्संग में गया । इस बार मुझे आगे बैठने को मिला । यह मेरे लिए परम सौभाग्य का दिन था । पूज्य बापूजी के सान्निध्यमात्र से मुझे गुरुतत्त्व की महत्ता समझ में आ गयी ।

उसके कुछ ही समय पश्चात् मैं इंग्लैंड वापस चला गया लेकिन ३ माह बाद मैं बापूजी के दर्शन के लिए बेचैन हो उठा ।

मैं भारत वापस आ गया । उस समय बापूजी हरिद्वार में पूरा एक महीना रुके थे । मैं वहाँ जा पहुँचा, प्रतिदिन नियमित रूप से सत्संग सुनता । यद्यपि अब भी मैं सत्संग बिल्कुल नहीं समझ पाता था लेकिन बापूजी की ओर से आनेवाला अतुलनीय प्रेम और आनंद का प्रवाह मुझे सुबह और शाम दोनों सत्रों में बाँधे रखता था । जब बापूजी हरिद्वार से जानेवाले थे, तब उन्होंने मुझे व्यासपीठ के पास बुलाया और शक्तिपात वर्षा का अनुपम प्रसाद दिया । उसी क्षण मेरे नेत्र आँसुओं से भर गये और मैं दंडवत् उनके श्रीचरणों में जा पड़ा, मुझे ऐसा अनुभव हुआ जिसका मैं वर्णन नहीं कर सकता ।

उस दिन से मैं बापूजी का भक्त बन गया हूँ । अभी समय निकाल के आश्रम में आता रहता हूँ । बापूजी के सान्निध्य के इन थोड़े-से दिनों में मुझे ढेर सारा प्रसाद मिला है । मेरा जन्म एक धनाढ्य परिवार में हुआ था । मेरे माता-पिता के पास मिलियन्स की (अरबों की) जमीन-जायदाद है । मैं खूब घूमा-फिरा हूँ और अनेक देशों की यात्राएँ की हैं, लेकिन जो प्रेम और शांति मैंने पूज्य बापूजी के दिव्य सान्निध्य में पायी है वह मुझे दुनिया में कहीं नहीं मिली । कितना भी धन हो उससे वह आनंद नहीं खरीदा जा सकता, जो एक ब्रह्मज्ञानी संत दे सकते हैं । मेरी माताजी ने भी बापूजी से मंत्रदीक्षा ली है और बापूजी के श्रीचरणों में उनकी अटूट श्रद्धा है । वे साल में एक-दो बार गुरुदेव के श्रीचरणों में प्रणाम करने व उनके आनंददायी सत्संग का श्रवण करने आती हैं ।

सचमुच, यह भारत देश का परम सौभाग्य है कि संत श्री आसारामजी बापू जैसे ब्रह्मज्ञानी संत यहाँ पर मौजूद हैं । अन्य संस्कृतियाँ तो उदय हुईं और चली गयीं पर शाश्वत सनातन धर्म ऐसे संतों की बदौलत आज भी खड़ा है । मैं हिन्दू संस्कृति को विश्व की महानतम संस्कृति मानता हूँ और अपना परम सौभाग्य समझता हूँ कि मुझे पूज्य बापूजी से मंत्रदीक्षा मिली है और उनके सान्निध्य में रहने का अवसर मिला है । भारतीय लोग निश्चय ही धन्य हैं कि यह संस्कृति उन्हें धरोहर में मिली है और मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह चिरस्थायी हो । भारतमाता की जय, सद्गुरुदेव की जय !

- Mr. James W. Higgins
27, Church street, South wells,
NG25 0HQ, U.K.

संस्था समाचार

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

२८ जून से १ जुलाई तक तीर्थनगरी हरिद्वार में एकांतवास के पश्चात् पूज्यश्री हिमाचल प्रदेश पहुँचे। वहाँ **२ व ३ जुलाई को धर्मशाला** में सत्संग-गंगा की रसधार बही। पूज्यश्री के श्रीमुख से निःसृत आत्मगंगा में अवगाहन करने धर्मशाला व आसपास के श्रद्धालुओं की अपार भीड़ उमड़ पड़ी। उनकी प्रगाढ़ धर्मनिष्ठा, संतनिष्ठा को देखकर 'संत हृदय नवनीत समाना' - पूज्यपाद बापूजी का पावन हृदयामृत बरस पड़ा। जिसका पान कर हिमाचलवासी भक्तवृंद कृतकृत्य हो उठे। प्रत्यक्ष उपस्थित भक्तों ने तो प्रत्यक्ष लाभ लिया ही, पाठकवृंद उसका एक अंश ही पठन-मनन व आचरण करके लाभान्वित हों। प्रस्तुत है एक अंश :

''**मनुष्यैः क्रियते यत्तु तन्न शक्यं सुरासुरैः ।**

जितना मनुष्य अपना कल्याण कर सकता है और भगवान के साथ अपना संबंध जागृत कर सकता है, वैसा तो देवता और दानव भी नहीं कर सकते, मनुष्य में ऐसी योग्यता है। लाखवाँ हिस्सा योग्यता विकसित हुई और मनुष्य बुद्धिजीवियों में गिना जाता है और बुद्धि का खर्च करके मरनेवाले शरीर की सुविधा में बेचारा जीवन खत्म कर देता है। मनुष्य-जीवन सुविधाभोग के लिए नहीं है, सुविधा और असुविधा का सदुपयोग करके परमात्मयोग के लिए है।''

४ (शाम) से ६ जुलाई (सुबह) तक लुधियाना (पंजाब) में सत्संग हुआ। यहाँ दुःख से बचने और सुख को पाने की कुंजी देते हुए बापूजी बोले : ''जो सेवा करता है वह कभी दुःखी नहीं हो सकता है। जो संसार को प्रीति करता है और सेवा लेता है, वह कभी सुखी नहीं रह सकता। जो संसार से मान लेना चाहता है, वह दुःखी रहेगा लेकिन जो संसार को मान देकर स्वयं अमानी होकर भगवान में शांत होता है, वह दुःखी नहीं होता। जहाँ स्वार्थ है, वहाँ दुःख है। जहाँ स्वार्थ है, वहाँ चिंता है। जहाँ निःस्वार्थता है और ध्यान है, वहाँ दुःख और चिंता टिक नहीं सकती।''

६ जुलाई (दोपहर) को **खन्ना (पंजाब)** में तथा **७ जुलाई** को **चंडीगढ़** में सत्संग हुआ। यहाँ हर किसीके पास अपना दुखड़ा रोने की आदत को त्यागकर भगवान के सम्मुख होने का संदेश देते हुए बापूजी बोले : ''आप जिस किसीको व्यथा मत सुनाओ, कोई भी व्यथा हो तो ठाकुरजी को कथा भी सुना दो, व्यथा भी सुना दो। 'महाराज ! हम तो ऐसे हैं, हमारा मन नहीं लगता, हमारे चित्त में काम है, क्रोध है...' हममें काम है, ऐसा बोलोगे तो ठाकुरजी प्रसन्न नहीं होंगे। 'हमारे मन में काम है, हमारे शरीर में बीमारी है, हममें तो तुम्हीं हो महाराज ! तुम्हारी सत्ता के सिवाय तो हम बोल भी नहीं सकते। हे प्रभु !' प्रार्थना करते-करते शांत हो जाओ। जिस विषय की आपको चाह है, आप जैसा बनना चाहते हैं, ऐसी दिन में नौ बार की कोई भी वक्तवाली प्रार्थना अंतर्यामी तक पहुँच ही जाती है। और प्रार्थना नहीं तो इतना ही किया करो कि 'प्रभुजी ! सुख-दुःख में सम रहें और आपमें प्रीति हो जाय, बस।' तो सब कुछ इसके अंदर आ जायेगा। बाकी और चीजें माँगनी नहीं पड़ेंगी।''

गुरुपूर्णिमा महोत्सव - २०१०

खेचरा भूचराः सर्वे ब्रह्मविद्दृष्टिगोचराः ।
सद्य एव विमुच्यन्ते कोटिजन्मार्जितैरघैः ॥

(वराह उपनिषद्)

भूचर-खेचर-स्थावर वृक्षादि सभी जीवों के कोटि जन्मों के पापों के पहाड़ों को दृष्टिमात्र से विनष्ट करनेवाले ब्रह्मवेत्ता संतों की पापनाशिनी, पुण्यप्रदायिनी दृष्टि का लाभ लेने का प्राचीन वैदिक पर्व है व्यासपूर्णिमा, गुरुपूर्णिमा। आषाढ़ी पूनम के दिन मनाया जानेवाला यह पर्व 'ज्ञानपूर्णिमा, देवपूर्णिमा' आदि नामों से भी विभूषित है।

भक्तों की उमड़ती अमाप भीड़ को विभाजित करने व उन्हें यातायात के खर्च व प्रवास-परिश्रम में रियायत देने के लिए भक्तवत्सल बापूजी प्रतिवर्ष यह महापर्व देश के अनेक स्थानों में शृंखलाबद्ध तरीके से मनाते हैं। परंतु इस वर्ष तो गुरुवर बापूजी ने अपने परिश्रम की बिल्कुल भी परवाह न कर इस शृंखला को और भी विस्तृत किया। इस वर्ष गुरुपूर्णिमा

महापर्व ८ राज्यों के १२ स्थानों में २१ दिनों के शृंखलाबद्ध कार्यक्रम के रूप में मनाया गया। इसकी पहली कड़ी थी **९, १० व ११ जुलाई सुबह ८.३० बजे तक जयपुर (राज.)** में हुआ महापर्व।

भगवन्नाम लेते हुए भगवद्विश्रांति तक पहुँचने की अनुभवसम्पन्न कला बताते हुए योगनिष्ठ बापूजी ने कहा : ''भगवन्नाम लेने के बाद उसके अर्थ में शांत होना इसको भगवद्विश्रांतियोग बोलते हैं। रात्रि को सोते समय दिन भर के जो कार्य-कलाप हैं उनका सिंहावलोकन कर लेना चाहिए। बढ़िया, अच्छे कार्य हों उन्हें ईश्वर को समर्पित करो। अच्छे कार्य के बदले में संसार के भोग चाहेंगे तो अच्छे कर्म तुच्छ भोग दे के मिट जायेंगे। लेकिन अच्छे काम भगवान को अर्पित करके भगवान में शांति चाहेंगे, भगवान की प्रीति चाहेंगे तो आप दिव्य गति को, ईश्वरीय-गति को प्राप्त हो जायेंगे।''

११ तारीख को ११ बजे से शाम ७ बजे तक कोलकाता (पश्चिम बंगाल) में सत्संग हुआ। अपने गुरु स्वभाव में, दिव्य स्वभाव में जगाते हुए यहाँ के गुरुप्रेमियों को पूज्यश्री बोले : ''दिव्य जीवन कैसे हो ? अपने को आत्मस्वरूप मानें, अपने को परमात्मा का मानें। अपने को शरीर न मानें, संसार की वस्तुओं से अपने को बड़ा न मानें, वस्तुएँ तो आती-जाती हैं लेकिन जो सदा रहता है वह दिव्य है मेरा आत्मा।''

उड़ीसा की सत्संग-पिपासु जनता की ओर से कई-कई बार पूज्यश्री को सत्संग हेतु प्रार्थनाएँ की गयी थीं। यह प्रदीर्घ अनुनय-विनय कुछ ऐसा रंग लाया कि गुरुपूनम-महोत्सव ही उड़ीसावासियों की झोली में पड़ गया। उड़ीसा के सरल, निर्मल भक्त-हृदयों की दर्शन-सत्संग की तड़प ही कुछ ऐसी थी कि इतने व्यस्त कार्यक्रम में से भी **१२ व १३ जुलाई (सुबह) तक भुवनेश्वर, १३ जुलाई को कोटगढ़, केसरापल्ली व १४ जुलाई को अनगुल** में सत्संग-कार्यक्रम देने पड़े। 'सबका मंगल सबका भला' के सिद्धांत को जीवन में उतारने की प्रेरणा देते हुए बापूजी बोले : ''सबका भला हम नहीं कर सकते लेकिन भला चाहने से हमारा दिल भला होने लगता है। कोई किसीको दुःख देता है तो सामनेवाले को दुःख मिले चाहे नहीं मिले, दुःख देने के विचार से उसका खुद का मन खराब होता है, जैसे भलाई करने के विचार से अपना ही भला होता है। जो दूसरों का मंगल करता है, मंगल चाहता है, उसका चित्त भले की भावनामात्र से भलीप्रकार उन्नत होता है, उसका प्रभाव बढ़ता है। जो स्वार्थ सिद्ध करना चाहता है उसका विकास नहीं होता।''

अनगुलवासियों को भगवान से दूरी व देरी मिटानेवाले भगवद्ज्ञान से परिपूर्ण सत्संग-प्रसाद देते हुए बापूजी ने कहा : ''शरीर मर जाता है फिर भी जो नहीं मरता, वह कौन है ? हरि है, तुम्हारा आत्मा है, वही जगन्नाथ है। दूर नहीं, दुर्लभ नहीं, परे नहीं, पराये नहीं खाली उसको बतानेवाला गुरु और पानेवाला शिष्य हो बस ! इसीलिए मनुष्य-जन्म मिला है। खाना-पीना, बच्चे पैदा करना यह कुत्ता भी जानता है लेकिन अपने हृदय में जो जगन्नाथ है, भुवनेश्वर है, विश्वेश्वर है, परमेश्वर है उसका ज्ञान पा के उसको प्रकट करनेवाला महान आत्मा हो जाता है।''

१४ (शाम) से १६ जुलाई (दोपहर) तक रायपुर में छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश सहित अन्यान्य राज्यों की जनता ने बड़ी संख्या में गुरुपूनम-दर्शन महोत्सव का लाभ उठाया। जनता के साथ-साथ जनप्रतिनिधि भी इस मौके का लाभ लेने से नहीं चूके। राज्य के मुख्यमंत्री डॉ. रमण सिंह ने भी पंडाल में हाजिरी लगायी और पूज्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त किये। बापूजी ने परहित, परदुःखकातरता को जीवन में उतारने का संदेश देते हुए कहा : ''जो दूसरों को कष्ट सहा के भी सुखी रहना चाहता है, उसके लिए बड़ा खतरा आयेगा। सास को, बहू को, देवरानी को, जेठानी को, नौकरानी को - किसीको भी कष्ट देकर खुद मजा लेते हैं तो आपके लिए बड़ी सजा और बड़े दुःखों की सम्भावना बढ़ जाती है। लेकिन जो अपने को थोड़ा कष्ट में डालकर दूसरे का दुःख हरता है तो उसको दूसरे के दुःख हरने का जो आत्म-संतोष मिलता है, आत्मा-परमात्मा का ओज, सामर्थ्य और मधुरता आती है, उसके आगे

संसारी सुख कोई मायना नहीं रखते।''

१६ (शाम) से १८ जुलाई (सुबह) तक भोपाल में गुरुपूनम महोत्सव मनाया गया। मनुष्य-जीवन में गुरु की आवश्यकता को उजागर करते हुए बापूजी बोले : ''शिवजी के लिए सोमवार, श्रीकृष्ण के लिए जन्माष्टमी, गणेशजी के लिए गणेश-चतुर्थी, देवी के लिए नवरात्र हैं, लेकिन इन सब देवी-देवताओं की पूजा करने के बाद भी जीव का अज्ञान नहीं मिटता। इसीलिए अज्ञान मिटाने के लिए चलते-फिरते गुरु की आवश्यकता होती है।''

१८ (शाम) व १९ जुलाई को औरंगाबाद (महा.) में सत्संग सम्पन्न हुआ। कर्म और धर्म का मर्म समझाते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''एक होता है कर्म दूसरा होता है धर्म। जो कर्म धर्म के लिए करता है वह चेतना को विकसित करता है लेकिन जो भोग के लिए कर्म करता है वह भोग-योनियों में, जड़ योनियों में, नीच योनियों में जाता है।''

२० व २१ जुलाई को आलंदी (पूना) में गुरुदर्शन के लिए विशाल, अतिविशाल जनमेदनी उमड़ पड़ी। आलंदी में सत्संग चल रहा था उस समय बरसात होने लगी तब पूज्य बापूजी ने कहा : ''बैठे रहना, थोड़ी देर मन में शांत होकर बोलो, मेघराजा ! दूसरी जगह पधारो, मेघराजा ! दूसरी जगह पधारो।'' ऐसा दो बार कहते ही पानी का गिरना तुरंत बंद हो गया। पूज्य बापूजी उवाच : ''ये देवता लोग बड़ा ध्यान रखते हैं। मेघराजा ने पानी रोक दिया। आप आत्म-साक्षात्कार करो तो पाँच भूत आपके मित्र बन जाते हैं। आप ईश्वर से जुड़ो तो आपका हित करके उनको आनंद आता है। जैसे कोई राजा का प्रिय होता है तो मंत्री उसके अनुकूल हो जाते हैं न, ऐसे ही ये भगवान के प्यारे मंत्री हैं, भगवद्रूप ही हैं सब।''

२३ (शाम) से २५ जुलाई (दोपहर) तक द्वारका (दिल्ली) में श्रद्धालुओं का सैलाब उमड़ पड़ा। गुरुपूर्णिमा पर्व की गरिमा का स्मरण करते हुए ये सहज उद्गार पूज्यश्री के श्रीमुख से निकल पड़े : ''गुरुपूर्णिमा के पर्व पर मानसिक पूजन भी होता है और बड़ी भारी तपस्या का दिन माना जाता है। गुरुपूर्णिमा का पर्व तब तक धरती पर मनाया जायेगा, जब तक मानव को सच्चे सुख की, सच्चे ज्ञान की और सच्चे जीवन की माँग रहेगी। गुरु का पूजन अपने आदर्श का पूजन है। गुरु का पूजन कोई व्यक्ति का पूजन नहीं, गुरु का आदर कोई व्यक्ति का आदर नहीं लेकिन अनंत व्यक्ति जिस अनंत की सत्ता में हैं उस परम सत्ता का आदर और पूजन है।''

इतनी जगहों पर गुरुपूनम के दर्शन-सत्संग का प्रसाद बाँटने के बाद भी **२५ (शाम) से २७ जुलाई तक अहमदाबाद** में गुरुपूर्णिमा पर्व पर भक्तों-साधकों की भारी भीड़ उमड़ी। ३ दिन तो आश्रम का वातावरण ऐसा लगा मानो, जनसागर लहरा रहा हो। पूज्यश्री बोले : ''अहंकार ले-लेकर, बड़ा बन के सुखी होना चाहता है और प्रेम दे-देकर अपने-आपमें पूर्णता का एहसास करता है। अहंकार लोभ में, विकारों में, क्रोध में दूसरों पर बरसकर उन्हें परिताप पहुँचा के सुखी होना चाहता है, लेकिन प्रेम अपनी मधुमय शीतलता से बरसते हुए दूसरों के दुःख, रोग-शोक हरकर उनकी शीतलता में अपनी शीतलता का एहसास करता है।''

सचमुच, यह उस छलकते हुए गुरुप्रेम का ही तो प्रभाव है कि गुरु के प्यारे अपनी व्यक्तिगत सुख-सुविधा की परवाह न करते हुए भी खिंचे चले आते हैं और पूज्य गुरुदेव भी अपने स्वास्थ्य, विश्राम की चिंता किये बिना ही दिन-रात प्रभुप्रेम बरसाते रहते हैं। धन्य-धन्य हैं ऐसे गुरुदेव, धन्य-धन्य हैं वे गुरु के प्यारे और धन्य-धन्य है यह भारत की संस्कृति, जिसमें निश्चल श्रद्धा, निर्मल प्रेम और अटूट विश्वास के प्रतीक गुरुपूर्णिमा जैसे महापर्व की व्यवस्था है ! ❐

राज्य अतिथि के रूप में पूज्य बापूजी का सम्मान

गुरुपूर्णिमा महापर्व के अवसर पर उड़ीसा, छत्तीसगढ़ एवं मध्य प्रदेश में पूज्य बापूजी का शुभागमन होने पर वहाँ की राज्य सरकारों ने पूज्यश्री को 'राज्य अतिथि' घोषित कर आपके प्रति सम्मान एवं अहोभाव व्यक्त किया।

संसारी सुख कोई मायना नहीं रखते ।''

१६ (शाम) से १८ जुलाई (सुबह) तक भोपाल में गुरुपूनम महोत्सव मनाया गया । मनुष्य-जीवन में गुरु की आवश्यकता को उजागर करते हुए बापूजी बोले : ''शिवजी के लिए सोमवार, श्रीकृष्ण के लिए जन्माष्टमी, गणेशजी के लिए गणेश-चतुर्थी, देवी के लिए नवरात्र हैं, लेकिन इन सब देवी-देवताओं की पूजा करने के बाद भी जीव का अज्ञान नहीं मिटता । इसीलिए अज्ञान मिटाने के लिए चलते-फिरते गुरु की आवश्यकता होती है।''

१८ (शाम) व १९ जुलाई को औरंगाबाद (महा.) में सत्संग सम्पन्न हुआ । कर्म और धर्म का मर्म समझाते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''एक होता है कर्म दूसरा होता है धर्म । जो कर्म धर्म के लिए करता है वह चेतना को विकसित करता है लेकिन जो भोग के लिए कर्म करता है वह भोग-योनियों में, जड़ योनियों में, नीच योनियों में जाता है ।''

२० व २१ जुलाई को आलंदी (पूना) में गुरुदर्शन के लिए विशाल, अतिविशाल जनमेदनी उमड़ पड़ी । आलंदी में सत्संग चल रहा था उस समय बरसात होने लगी तब पूज्य बापूजी ने कहा : ''बैठे रहना, थोड़ी देर मन में शांत होकर बोलो, मेघराजा ! दूसरी जगह पधारो, मेघराजा ! दूसरी जगह पधारो ।'' ऐसा दो बार कहते ही पानी का गिरना तुरंत बंद हो गया । पूज्य बापूजी उवाच : ''ये देवता लोग बड़ा ध्यान रखते हैं । मेघराजा ने पानी रोक दिया । आप आत्म-साक्षात्कार करो तो पाँच भूत आपके मित्र बन जाते हैं । आप ईश्वर से जुड़ो तो आपका हित करके उनको आनंद आता है । जैसे कोई राजा का प्रिय होता है तो मंत्री उसके अनुकूल हो जाते हैं न, ऐसे ही ये भगवान के प्यारे मंत्री हैं, भगवद्रूप ही हैं सब ।''

२३ (शाम) से २५ जुलाई (दोपहर) तक द्वारका (दिल्ली) में श्रद्धालुओं का सैलाब उमड़ पड़ा । गुरुपूर्णिमा पर्व की गरिमा का स्मरण करते हुए ये सहज उद्गार पूज्यश्री के श्रीमुख से निकल पड़े : ''गुरुपूर्णिमा के पर्व पर मानसिक पूजन भी होता है और बड़ी भारी तपस्या का दिन माना जाता है । गुरुपूर्णिमा का पर्व तब तक धरती पर मनाया जायेगा, जब तक मानव को सच्चे सुख की, सच्चे ज्ञान की और सच्चे जीवन की माँग रहेगी । गुरु का पूजन अपने आदर्श का पूजन है। गुरु का पूजन कोई व्यक्ति का पूजन नहीं, गुरु का आदर कोई व्यक्ति का आदर नहीं लेकिन अनंत व्यक्ति जिस अनंत की सत्ता में हैं उस परम सत्ता का आदर और पूजन है ।''

इतनी जगहों पर गुरुपूनम के दर्शन-सत्संग का प्रसाद बाँटने के बाद भी **२५ (शाम) से २७ जुलाई तक अहमदाबाद** में गुरुपूर्णिमा पर्व पर भक्तों-साधकों की भारी भीड़ उमड़ी । ३ दिन तो आश्रम का वातावरण ऐसा लगा मानो, जनसागर लहरा रहा हो । पूज्यश्री बोले : ''अहंकार ले-लेकर, बड़ा बन के सुखी होना चाहता है और प्रेम दे-देकर अपने-आपमें पूर्णता का एहसास करता है । अहंकार लोभ में, विकारों में, क्रोध में दूसरों पर बरसकर उन्हें परिताप पहुँचा के सुखी होना चाहता है, लेकिन प्रेम अपनी मधुमय शीतलता से बरसते हुए दूसरों के दुःख, रोग-शोक हरकर उनकी शीतलता में अपनी शीतलता का एहसास करता है ।''

सचमुच, यह उस छलकते हुए गुरुप्रेम का ही तो प्रभाव है कि गुरु के प्यारे अपनी व्यक्तिगत सुख-सुविधा की परवाह न करते हुए भी खिंचे चले आते हैं और पूज्य गुरुदेव भी अपने स्वास्थ्य, विश्राम की चिंता किये बिना ही दिन-रात प्रभुप्रेम बरसाते रहते हैं । धन्य-धन्य हैं ऐसे गुरुदेव, धन्य-धन्य हैं वे गुरु के प्यारे और धन्य-धन्य है यह भारत की संस्कृति, जिसमें निश्चल श्रद्धा, निर्मल प्रेम और अटूट विश्वास के प्रतीक गुरुपूर्णिमा जैसे महापर्व की व्यवस्था है ! ❐

राज्य अतिथि के रूप में पूज्य बापूजी का सम्मान

गुरुपूर्णिमा महापर्व के अवसर पर उड़ीसा, छत्तीसगढ़ एवं मध्य प्रदेश में पूज्य बापूजी का शुभागमन होने पर वहाँ की राज्य सरकारों ने पूज्यश्री को 'राज्य अतिथि' घोषित कर आपके प्रति सम्मान एवं अहोभाव व्यक्त किया ।

गुरुपूर्णिमा महोत्सव-२०१०
गुरु-दर्शन का पर्व मनाने,
उमड़ा जनसागर आया ज्वार ।
गुरुवर पहुँचे बीच में उनके,
हृदय में उमड़े श्रद्धा-प्यार ।।

गुरुपूर्णिमा महोत्सव-२०१०
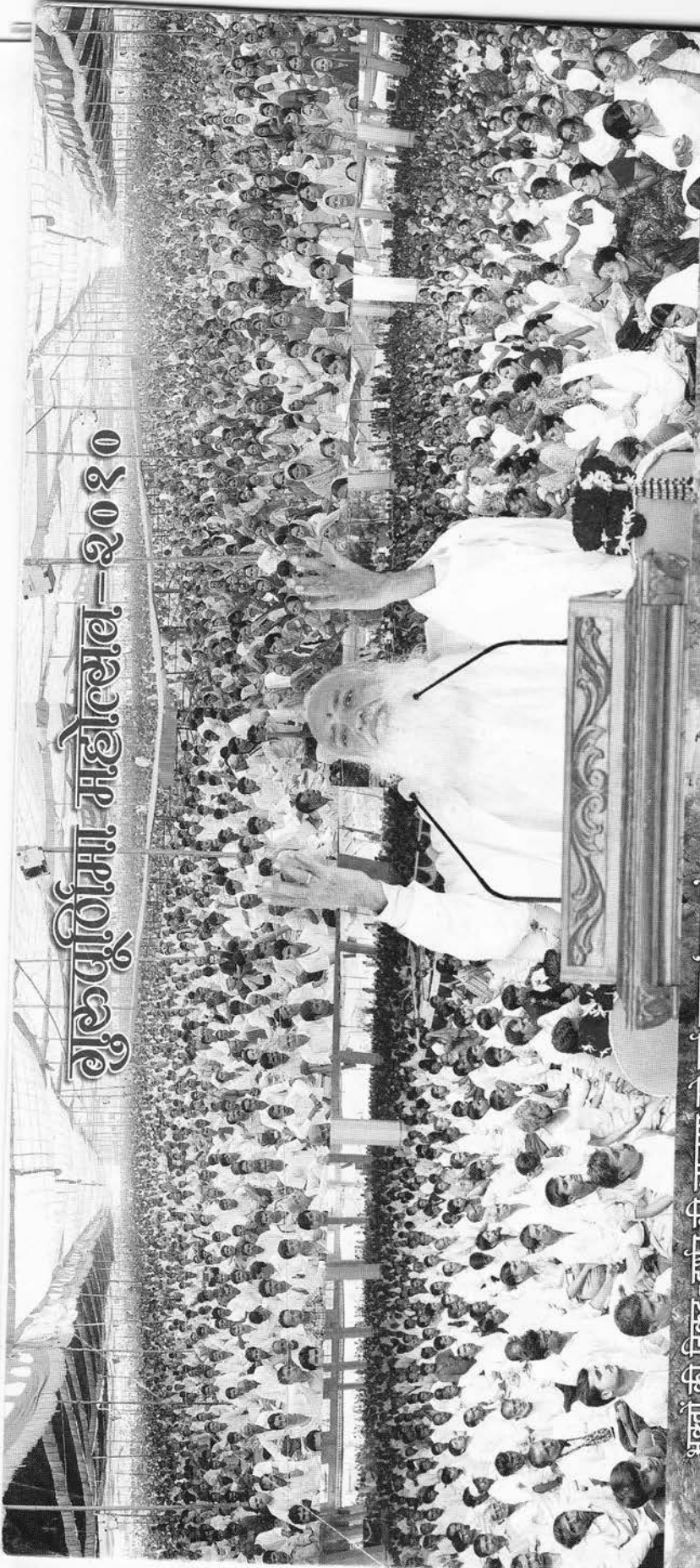
भक्तों की निकट-दर्शन की लालसा को पूर्ण करता 'ब्रह्मरथ'

भक्तों के प्रेरणातीर्थ : पूज्य बापूजी के आश्रम

RNP. No. GAMC 1132/2009-11
(Issued by SSPOs Ahd, valid upto 31-12-2011)
WPP LIC No. CPMG/GJ/41/09-11
RNI No. 48873/91
DL (C)-01/1130/2009-11
WPP LIC No. U (C)-232/2009-11
MH/MR-NW-57/2009-11
MR/TECH/WPP-21/NW/2010
'D' No. MR/TECH/47.4/2010

Posting at PSO Ahmedabad between 1st to 17th of every month. ❊ Posting at ND PSO on 5th & 6th of E.M. ❊ Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.